छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा
हिन्दी मासिक मुख पत्र
मास : ज्येष्ठ–आषाढ़ संवत् 2075
जून 2018

ओ३म्

अंक 153, मूल्य 10

अग्निदूत

अग्निं दूतं वृणीमहे. (ऋग्वेद)

वीरता की अद्भुत मिसाल थीं
रानी लक्ष्मीबाई

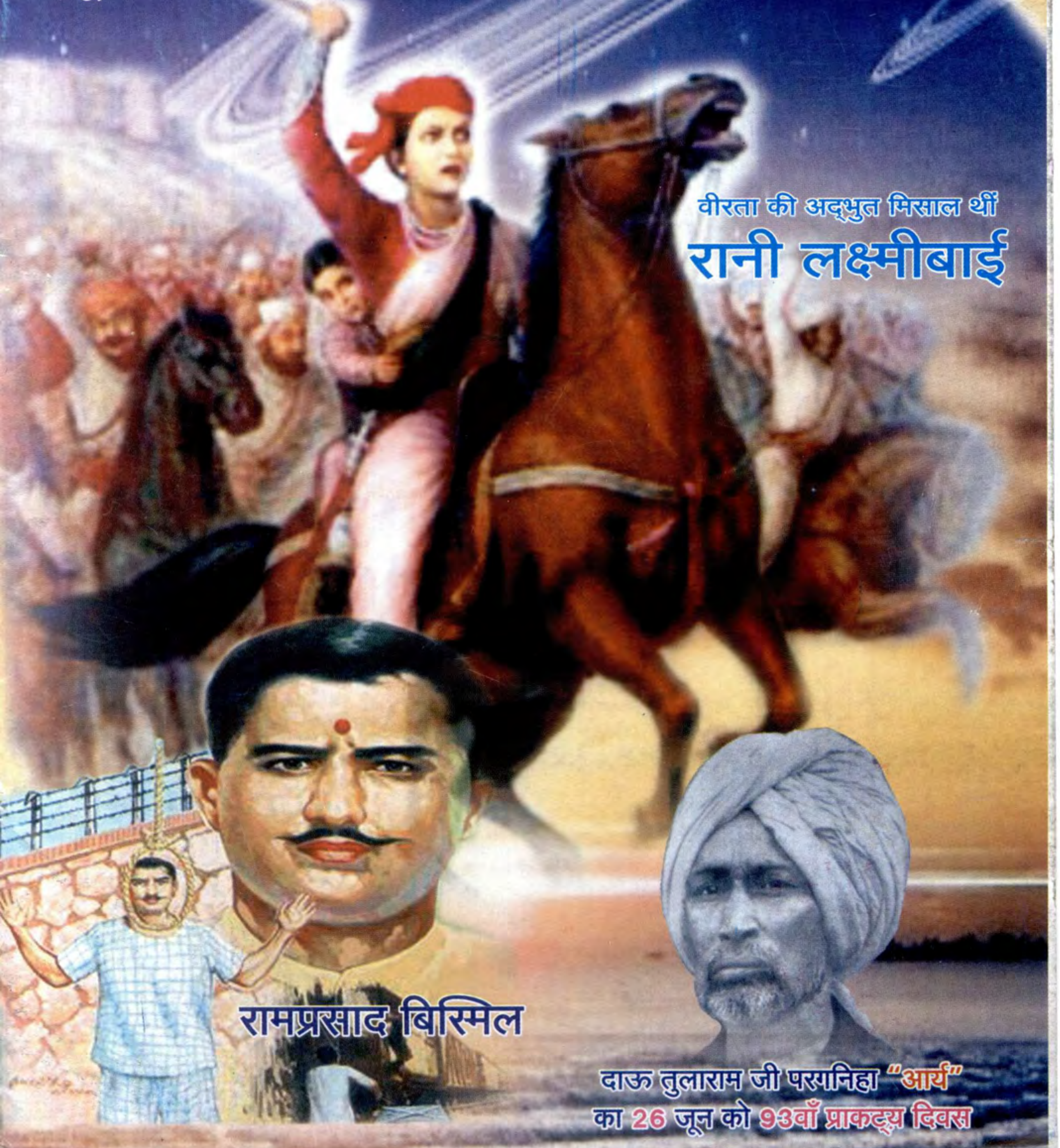

दाऊ तुलाराम जी परगनिहा "आर्य"
का 26 जून को 93वाँ प्राकट्य दिवस

आर्यवीर दल छत्तीसगढ़ द्वारा
आयोजित
युवा चरित्र निर्माण शिविर
दिनांक 2 मई 2018
का उद्घाटन
संत हरकेवलदास जी महाराज
के करकमलों द्वारा किया गया.

प्रशिक्षण के दौरान आयोजित यज्ञ व दण्ड बैठक का दृश्य

शिविरार्थियों के साथ यज्ञ एवं स्वल्पाहार करते हुए
लुण्ड्रा विधायक माननीय चिंतामणी जी महाराज एवं अन्य अतिथिगण

अग्निदूत

हिन्दी मासिक

राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक विचारों की मासिक पत्रिका

विक्रमी संवत् - २०७५
सृष्टि संवत् - १,९६,०८,५३,१२०
दयानन्दाब्द - १९५

: प्रधान सम्पादक :
आचार्य अंशुदेव आर्य
प्रधान सभा
(मो. ०७०४९२४४२२४)

★

: प्रबंध सम्पादक :
आर्य दीनानाथ वर्मा
मंत्री सभा
(मो. ९८२६३६३५७८)

★

: सहप्रबंध सम्पादक :
श्री जोगीराम आर्य
कोषाध्यक्ष सभा
(मो. 9977152119)

★

: सम्पादक :
आचार्य कर्मवीर
मो. ९७५२३८८२६७

पेज सज्जक :
श्रीनारायण कौशिक

- कार्यालय पता -
छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा
दयानन्द परिसर, आर्य नगर, दुर्ग (छ.ग.)४९१ ००१
फोन : (०७८८) ४०३०९७२
फैक्स नं. : ०७८८-४०११३४२ ;
e-mail : chhattisgarhsabha@gmail.com

वार्षिक शुल्क-१००/- दसवर्षीय-८००/-

वर्ष - १३, अंक ११ — ओ३म् — मास/सन् - जून २०१८

श्रुतिप्रणीत-सिद्धधर्मवह्निरूपतत्त्वकं,
महर्षिचित्त-दीप्त वेद-सारभूतनिश्चयं ।
तदग्निसंज्ञकस्य दौत्यमेत्य सद्मसद्मकम् ,
सभाग्निदूत-पत्रिकेयमादधातु मानसे ।।

विषय - सूची

पृष्ठ क्र.

१.	राजा और धर्माध्यक्ष	स्व. रामनाथ वेदालंकार	०४
२.	उखाड़ फेंको इन रूढ़ियों को	आचार्य कर्मवीर	०५
३.	राष्ट्र भक्ति सबसे बड़ा धर्म	अखिलेश आर्येन्दु	०८
४.	यज्ञकर्ता का नाश नहीं होता	मनुदेव 'अभय' विद्यावाचस्पति	११
५.	आज से बढ़कर था प्राचीन विज्ञान	डॉ. महावीर 'मीर' विद्यालंकार	१२
६.	हे मानव ! नारी के सम्मान में जरा आँखें खोलो	विवेक प्रिय आर्य	१६
७.	सृष्टि उत्पत्ति विषयक वैदिक सिद्धान्त और महर्षि दयानन्द	मनमोहन कुमार आर्य	१९
८.	सच्चे मानव की तलाश	डॉ. कन्हैयाय लाल आर्य	२१
९.	आपसी वैमनस्य, कारण व निवारण	डॉ. बिजेन्द्रपाल सिंह	२४
१०.	विश्व पर्यावरण दिवस पर विशेष	डॉ. सुरेन्द्र कादियाण	२६
११.	भारत का महान क्रांतिकारी- रामप्रसाद बिस्मिल	लोचन आर्य	२८
१२.	वीरता की देवी रानी लक्ष्मीबाई	डॉ. अशोक आर्य	३०
१३.	पुण्य स्मरण - दानवीर दाऊ तुलाराम जी परगनिहा	दीनानाथ वर्मा	३१
१२.	होमियोपैथी से मूत्र ग्रन्थियों (किडनी) से उत्पन्न रोगों का उपचार	डॉ. विद्याकान्त त्रिवेदी	३३
१३.	समाचार प्रवाह		३४

सूचना : छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा का अणुसंकेत
(ई-मेल) E-mail : chhattisgarhsabha@gmail.com
(सम्पादक) E-mail : shastrikv1975@gmail.com

सूचना : हमारा नया वेब साइट देखें
Website : http:/www.cgaryapratinidhisabha.com

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है।

सम्पादक प्रकाशक मुद्रक - आचार्य अंशुदेव आर्य द्वारा छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग के वैदिक मुद्रणालय से छपवाकर प्रकाशित किया गया ।

राजा और धर्माध्यक्ष

वेद वेदामृत

भाष्यकार - स्व. डॉ० रामनाथ वेदालङ्कार

विशां राजानमद्भुतम्, अध्यक्षं धर्मणामिमम्।
अग्निमीळे स उ श्रवत् ॥ ऋग्. ८.४२.२४

ऋषिः विरुपः आङ्गिरसः ॥ देवता अग्निः । छन्दः गायत्री ।

● **(विशां)** प्रजाओं के **(राजानं)** राजा **(अद्भुतं)** अद्भुत, **(धर्मणा)** धर्मों के **(अध्यक्षं)** अध्यक्ष **(इमं)** इस **(अग्नि)** तेजस्वी नायक परमेश्वर की **(ईडे)** स्तुति करता हूँ। **(सः उ)** वह निश्चय ही **(श्रवत्)** सुने।

क्या तुम उसे जानते हो, जो सब प्रजाओं का राजा है, अद्भुत है और धर्मों का अध्यक्ष है ? अग्निस्वरुप तेजोमय परमेश्वर ही इन सब गुणों एवं वैचित्र्यों का धारक है। यद्यपि जगत् के विविध भूभागों में अनेक मानवीय राजे-महाराजे शासन कर रहे हैं, पर असली शासकों का शासक और राजाओं का राजाधिराज तो वह अग्निदेव ही है, तेजस्विता की राजमाला धारण करने वाला परमात्मदेव ही है। जहां मानवी राजे-महाराजों की गति नहीं है, वहाँ उसकी गति है। सांसारिक राजाधिराजों के बड़े-बड़े साम्राज्य उसके एक हल्के-से-प्रहार से विध्वस्त हो जाते हैं। बड़े-से-बड़े सत्ताधारी उसके आगे झुकते हैं, उसकी कृपाकोर को पाने के लिए लालायित रहते हैं। वह परमात्मदेव अद्भुत है, अलौकिक है, विस्मयकारी है। हमें सूर्य, चांद, सितारे, पर्वत, समुद्र आदि लौकिक वस्तुएं ही कम विस्मयकारी नहीं लगतीं, परमात्मा की रची हुई एक-एक प्राकृतिक वस्तु पर हम मुग्ध हो जाते हैं पर परमात्माग्नि तो उन सबसे अधिक विस्मयावह है, क्योंकि प्रत्येक विशेषता की पराकाष्ठा उसमें विद्यमान है। सूर्य पर हम उसकी ज्योति के कारण मुग्ध होते हैं, पर प्रभु की ज्योति उससे भी सहस्रगुणित है। चांद पर हम उसकी शीतल चांदनी के कारण मुग्ध होते हैं, पर प्रभु की शीतलता उससे भी अनन्तगुणित है। सितारों पर हम उनकी चमक के कारण मुग्ध होते हैं, पर प्रभु की चमक के आगे सितारों की चमक कुछ भी नहीं है। पर्वत पर हम उसकी ऊँचाई के कारण मुग्ध होते हैं, पर प्रभु की ऊँचाई के सम्मुख पर्वत की ऊँचाई तुच्छ है। समुद्र पर हम उसकी अगाधता के कारण मुग्ध होते हैं, पर प्रभु की महिमा की अगाधता समुद्र की अगाधता को भी मात करती है। इस प्रकार परम प्रभु सबसे अद्भुत है, सबसे अधिक विस्मयकारी है। वह परमात्म-देव धर्माध्यक्ष भी हैं। जैसे कोई न्यायाधीश धर्माध्यक्ष बनकर अभियोगों को न्याय की तराजू पर तोलता और सबके साथ न्याय करता है, वैसे ही वह देवाधिदेव भी सबके सब शुभाशुभ कर्मों का प्रत्यक्षदर्शी होता हुआ सबको न्यायपूर्वक कर्मफल प्रदान करता है। साथ ही वह समस्त धर्मों अर्थात् गुणों का अध्यक्ष भी है, सत्य, न्याय, दया आदि सब गुण उसमें सर्वातिशायी रुप में एकनिष्ठ होकर विद्यमान है। ऐसे उस अग्निदेव का मैं स्तवन करता हूँ, पूजन करता हूँ, उससे सद्गुणों की याचना करता हूँ। वह देव मेरी पुकार को सुने, पूर्ण करे।

सम्पादकीय

उखाड़ फेंको इन रुढ़ियों को

सहृदय पाठकों !

आज यह बात शत प्रतिशत सत्य है कि समाज को दिशा देने के लिए कुछ कायदे कानून बनाए जाते हैं किन्तु यही कायदे कानून किसी रिवाज का रुप धारण कर लेते हैं तो उसका भयंकर रुप सामने आता है। जन्म के आधार पर वर्ण-व्यवस्था को स्वीकार करके समाज ने अपने आपको अनेकानेक संकटों में फँसा लिया है। समाज में व्याप्त अनेक रीति-रिवाज जैसे वंश-प्रथा, बाल-विवाह, बहु-विवाह, विधवा-विवाह निषेध, दहेज, अनमेल-विवाह, देवदासी-प्रथा, मृत्यु भोज, श्राद्ध, आभूषण प्रथा, पर्दा-प्रथा, छुआछूत, ऊँच-नीच एवं स्त्री-स्वतन्त्रता पर बन्धन आदि कुप्रथाओं को यदि हम हटाने में समर्थ हो जायें तो समाज और देश की प्रगति की चाल अनेक गुना बढ़ सकती है।

वंश-प्रथा के अंध-विश्वास ने हमें अविवेकी और आलसी बना दिया है। सहारे की कामना क्यों ? बिना बेटे के हमारा जीवन सफल नहीं होगा, हमारी मुक्ति सम्भव नहीं। कैसी थोथी कल्पना है ? विधवा विवाह निषेध से एक ओर नैतिकता व चरित्र की दुर्गति हुई है तो दूसरी ओर साम्प्रदायिकता ने जन्म ले न केवल दंगे कराये हैं बल्कि देश के विभाजन को बढ़ावा दिया। पुरुष तो एक ही नहीं वरन् वृद्धावस्था में भी दो बार शादी करने में गर्व का अनुभव कर सकता है। दहेज-प्रथा जिससे समाज में अनैतिकता और चरित्रहीनता घर कर रही है। अनमेल-विवाह हो रहे हैं, दहेज के अभाव या लोभ में नवविवाहितायें सताई जा रही है, उनकी हत्यायें हो रही है और उनका परित्याग किया जा रहा है। परिवार परिवार से जुड़ कर भी ऐसे दूर हैं कि उनका पूर्ण प्रेम व पारिवारिक घनिष्ठता एवं आनन्द शत्रुता में बदल रहा है।

आभूषण-प्रथा फिजूलखर्ची की सीमा को लांघे जा रही है। इनके समय की बरबादी तथा जान कर आने वाले जोखिम को हम पहचानने से आखिर क्यों इन्कार कर रहे हैं ? अगर इस शौक को समाप्त नहीं किया गया तो समाज व परिवारों का सर्वनाश

होता रहेगा, यह निश्चित है। नारियों में पर्दा-प्रथा, किसी कवि के शब्दों में पुरुषों की अक्ल पर पर्दा है। क्या कभी पुरुष-समाज ने शान्ति से विचार किया है कि इससे हमारी मां-बहिनों, बेटियों व बहुओं पर क्या प्रभाव पड़ रहा है ? उनकी शिक्षा-दीक्षा पर अंकुश लग रहा है, विशेषतया ग्रामीण इलाकों में आज भी अशिक्षा का बोल-बाला है। उनका कार्यक्षेत्र चूल्हा चक्की तक ही सीमित रखा जा रहा है। पर्दा-प्रथा के संदर्भ में कभी महात्मा गांधी ने कहा था - हमारी स्त्रियों को वही स्वतन्त्रता क्यों नहीं मिली जो पुरुषों को है। वे बाहर निकल कर ठंडी हवा क्यों नहीं खा सकती ? चरित्र की पवित्रता बन्द कमरे की उपज नहीं है। अस्तु ... पर्दा-प्रथा हमारी अपनी कमजोरी, अनिश्चय, तंगदिली और लाचारी के मूल कारणों में से एक है, इसलिए हमें एक जबरदस्त वार करके पर्दे को फाड़ डालना होगा । इसी से सबका कल्याण संभव होगा।

जाति-पाति की पैनी धार ने हमारे समाज को लहू-लुहान कर दिया है,और आज भी देश टुकड़ों-टुकड़ों में बंटता चला जा रहा है। अपने-अपने स्वतन्त्र राज्यों की मांग, जिसका फल प्रति दिवस बढ़ती हिंसा व परिवारों के परिवारों का खून, सामूहिक हत्यायें और देश के किसी भी भाग में भड़कने वाले दंगे क्या साम्प्रदायिकता को बढ़ावा नहीं देते ? सोचें ! जातिवाद के नाम पर यह देश कितना गर्त में चला जा रहा है। संविधान निर्माताओं ने कुछ समय के लिए आरक्षण की व्यवस्था रखी थी वह भी संतुलन के लिए किन्तु तथाकथित सत्ताधारियों ने स्वार्थ की रोटियाँ सेंकने के लिए आजादी के ७० साल के बाद भी उसे अपने ऊपर लाद रखा है, जिसकी प्रचंड आँच में कभी जाट आन्दोलन के रुप में तो कभी गुर्जर आन्दोलन के रुप में कभी पाटीदार तो कभी दलित पूरा देश सुलसता रहता है ये सब जातिवाद का ही जहर है।

राष्ट्र के राजनेता व कर्णधार क्यों नहीं सोचते ? मृत्यु-भोज, श्राद्ध, तर्पण आदि समय व पैसों की बर्बादी है। यह जान कर भी लोग आज अनजान बन लकीर के फकीर क्यों बन कर बैठे हैं ? जिन माता-पिता को उनके जीवित रहते दो घूंट पानी भी नहीं पिलाया जाता, मरने के बाद उन्हीं के नाम पर भोज, गोदान, शैय्यादान एवं पिंडदान करना, यह कैसी समझदारी ? वह भी केवल ब्राह्मणों को ही क्यों दिया जाए? भूखे, नंगे, लूले-लंगड़े, अंधे-बहरे, कोढ़ी एवं अपाहिजों को यह दान व भोजन क्यों नहीं दिया जाये ? देश में आज करोड़ों स्त्री-पुरुषों व बच्चों को दो जून की रोटी भी नहीं मिल पा रही है, रहने को मकान नहीं, तन ढंकने को कपड़ा नहीं और मृत्यु-भोज, शादी-ब्याह एवं उत्सवों में हजारों लाखों की बर्बादी यह कैसी नादानी है ? जबकि देश का अधिकांश भाग सूखा-ग्रस्त है। क्यों नहीं हम प्रण लेते कि अब भविष्य में ये घटिया व अंध विश्वासी परम्परायें नहीं चलेंगी, नहीं चलेंगी।

शिक्षा, योग्यता, काबलियत आदि सद्गुणों के आधार पर मनुष्य को ऊँचा गिना जाए। व्यक्ति ऊँचा है, न कि जाति। जो व्यक्ति योग्य, विद्वान् है और सद्गुणी है, उसका जन्म चाहे किसी भी घराने में हुआ हो उसे संस्कारों, व्यवहारों व विद्वता की दृष्टि से ऊँचा मानना ही चाहिए। अनपढ़. अव्यवहारी, असंस्कारी को नीचा ही मानें और मानना चाहिए। भावना में बह कर एवं नेतागिरी की प्रतिष्ठा को प्रतिष्ठित करने की दृष्टि से यह दिखावा करना कि हम इन परम्पराओं व कुमतियों को दूर कर रहे हैं, इतने प्रयास कर रहे हैं आदि भावुकता के वशीभूत हो शोर मचाना, दिखावा व छलावा मात्र ही होगा। जब परिस्थितियाँ इसकी जड़ों को मूल से उखाड़ने हेतु सक्रिय स्वरुप धारण करेगी

तभी जन-जागृति के माध्यम से चन्द दिनों में इन्हें नष्ट करने में अवश्य सफलता मिलेगी। किसी प्रचलित मान्यता के विरुद्ध आप लाख तर्क देते रहें, उसे नैतिक दृष्टि से अनुचित बताते रहें, वह तब तक छोड़ी नहीं जायेगी जब तक कि नई परिस्थितियों में वह अप्रासंगिक नहीं हो जाती, प्रगति के पथ में सुस्पष्ट नहीं बन जाती। बिना रोटी-बेटी का नाता किए आप लाख चिल्लाते रहें आप न अछूतों का उद्धार कर सकते हैं, न जाति-पाति के बंधन तोड़ सकते हैं और न ही शुद्धि का आन्दोलन आगे बढ़ा सकते हैं।

सभी अपना आदर्श कर्त्तव्य व अधिकार बनायें, ठोस कार्य करने का संकल्प लें कि हम रूढ़ियों को काटेंगे और कुमतियों को दूर करेंगे। इससे देश में व्याप्त जाति-पाति और छूआ-छूत समस्या निश्चित रुप से सुलझेगी। वह दिन दूर नहीं जब प्रत्येक भारतीय अपने को भारतीय कहलाने में गर्व का अनुभव करेगा तथा भारत विश्व में जगद्गुरु की खोई प्रतिष्ठा को पुनः अवश्य प्राप्त करेगा।

जात-पात के परिणाम के कारण भारत में एक राष्ट्रीयता का बनना भी असम्भव हो गया है। यहां जितनी जातियां तथा उपजातियां हैं। जात-पात तोड़ कर समता और बन्धुता उत्पन्न करना ही आज युग-धर्म है। जो राष्ट्र इस युग-धर्म की अवहेलना करेगा वह नष्ट हो जायेगा। जात-पात के कारण हम सदा अपने को पराया बनाते आये हैं और अब तक भी बना रहे हैं। परन्तु किसी एक पराए को अपना नहीं बना सके। ..... जात पात राष्ट्रीय महारोग है जो सहस्रों वर्ष तक देश की दासता का कारण बना है। इसलिए इसको मिटाना परम कर्त्तव्य है। यदि हम चाहते हैं कि भारत की आने वाली पीढ़ियां जात-पात रुपी क्षयरोग का शिकार न बनें तो हमें अपने वर्तमान को इस महारोग से मुक्त करने का यत्न करना ही चाहिए।.... जाति-भेद के कारण हिन्दू-समाज नारंगी के सदृश है। यह ऊपर से तो एक प्रतीत होता है परन्तु ऊपर का छिलका फटते ही भीतर अलग-अलग फाँके पड़ी है। ......पाकिस्तान के निर्माण के लिए अंग्रेजों या जिन्नाह को कोसने के स्थान पर हिन्दुओं को अपनी जात-पात को ही कोसना चाहिए।

अस्तु ! इक्कसवीं सदी के अन्त में जीने वाले सभी प्राणियों से जो इक्कीसवीं सदी में जीने का सपना दिल व दिमाग में संजोये बैठे है उनसे तथा सुधी पाठकों से निवेदन करूंगा कि आपस में सब मिलकर ऐसा नया समाज बनायें, जो अन्ध-विश्वासों, थोथी-परम्पराओं व सामाजिक-कुमतियों का समूल नाश कर ऊँच-नीच व जात-पात की दीवारों को तोड़ें, स्नेह व सहयोग से परस्पर मन को जोड़ें। प्रेमालिंगन में बंध वैमनस्य को त्यागे और मानव-प्रेमी बन मानव-मात्र को एक समझ अपनायें। हिंसा को छोड़ अहिंसा से समस्त विश्व में शान्ति स्थापित कर विश्व-बन्धुत्व की भावना को साकार करें। यही सोच कर इन पंक्तियों को अपनायें हिन्दू-मुस्लिम, सिक्ख-ईसाई, नहीं गैर, हैं सब भाई-भाई। अपने पराये के भावों को भुलाकर जाति, देश, प्रान्तीयता व भाषा की भावना को परे फैंक मानवता को सच्चा पथगामी बनायें। इसी से हमारा व मानव-मात्र का कल्याण है।

अतः आओ ! जाति-पाति की दीवारों को तोड़कर एक सच्चा व अच्छा मानवतावादी समाज बनाने की दिशा में देश का प्रत्येक व्यक्ति अपनी खुशहाली खुद ब खुद आ जाएगी।

अयं निजः परोवेति गणना लघु चेतसाम् । उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकंम् ॥

- आचार्य कर्मवीर

राष्ट्रचिन्तन : राष्ट्रभक्ति सबसे बड़ा धर्म

- लेखक : अखिलेश आर्येन्दु

शास्त्रों और पुराणों में देशहित और देशभक्ति की अनेक कहानियाँ और अनेक प्रेरक कथाएं वर्णित है। वेद जैसे कालजयी ग्रन्थ में तो राष्ट्र के कल्याण को पावन-कर्म माना गया है। वे कौन-कौन से तत्त्व हैं जो देश को महान्, प्रगतिशील, आदर्शवादी और परिपूर्ण बना सकते हैं, इसके बारे में बहुत ही सारगर्भित विवेचना वेदों में की गई है। अथर्ववेद में पृथ्वी की वंदना के लिए पूरा एक अध्याय (काण्ड) ही है। अथर्ववेद के बारहवें काण्ड में वर्णित पृथ्वी की वंदना के जो मंत्र हैं वे हर मनुष्य का धरती मां के प्रति प्रेम, कर्त्तव्य, धर्म और भावना होनी चाहिए, उसे भी बहुत ही मार्मिक ढंग से समझाया गया है। अथर्ववेद के जिस सूक्त में राष्ट्र-धर्म के तत्त्वों का वर्णन किया गया है, वह मंत्र इस प्रकार है-

सत्यं बृहद् ऋतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति।
सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्युरुलोकं पृथिवी नः कृणोति ॥
(अथर्ववेद १२-१-१)

मन्त्र में कहा गया है - राष्ट्र की प्रगति और कल्याण के लिए आठ तत्त्व आवश्यक है। वे आठ तत्त्व सत्य, उद्यम, ऋत, उग्र (तेज) दीक्षा, तप, ब्रह्म और यज्ञ। ये तत्त्व देश और समाज को उत्तम बनाने के साथ ही साथ मनुष्य के जीवन को भी पावन बनाते हैं। मतलब इन आठों के द्वारा मनुष्य, परिवार, समाज, राष्ट्र और सारी धरती सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम् बनाई जा सकती है। एक छात्र कैसे इन राष्ट्रवादी आधारों का पालन या अपने जीवन में निर्माण कर सकता है, एक इंसान कैसे इन्हें आत्मसात् कर सकता है और एक महिला किस प्रकार अपने जीवन का अंग बना सकती है, इसे जानने के लिए उन्हें विस्तार से समझना आवश्यक है।

देशहित के आठ आधारों (तत्त्वों) में पहला आधार या तत्त्व सत्य को बताया गया है। व्याकरण के अनुसार सत्य शब्द अस्तीति सत् और सतः भावः सत्यम् अर्थात् जिसकी सत्ता है, वह सत्य से भाषित होता है। इससे यह नहीं समझना चाहिए कि चोर, डाकू और दुष्ट जनों की सत्ता है तो वे भी सत्य है। इसका निराकरण करते हुए उपनिषदकार ने कहा है, 'सत्यमेवजयते', नानृतम् अर्थात् सत्य की जीत तब होती है जब वह असत्य न हो। इसके अलावा वेद में सत्य की जय के लिए ऋत अर्थात् प्रकृति के नियमों का शाश्वत पालन करना भी साथ में हो। मतलब असत्य से सत्य की जीत नहीं होती। शास्त्र में सत्य की परिभाषा इस तरह दी गई है - नहि सत्यात्परोधर्मः अर्थात् सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं है। सत्योनोत्तभिता भूमि यानी यह धरती सत्य के सहारे ही टिकी हुई है या सत्य ने भूमि को उठाया हुआ है। महर्षि दयानन्द ने सत्यं की परिभाषा करते हुए सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है - जो वस्तु जैसी है, वैसी ही मानी जाए, कही जाए, लिखी जाए और पढ़ी जाए वह सत्य कही जाती है। महात्मा गांधी ईश्वर और सत्य को एक दूसरे को पर्यायवाची मानते थे। इतनी परिभाषाओं से यह पता चलता है कि सत्य राष्ट्रोन्नति का परम आधार या तत्त्व ही नहीं, बल्कि व्यक्ति, परिवार और समाज की प्रगति और कल्याण के लिए भी बहुत जरूरी है। जिस परिवार, समाज और देश में सत्यवादी जन अधिक मात्रा में रहते हैं, वह परिवार, समाज और देश प्रगति की राह पर अनवरत आगे बढ़ता जाता है। सत्य के पालन से जो व्यक्तिगत स्तर पर लाभ होता है, वह है अपने प्रति ईमानददार होना। असत्यवादी व्यक्ति जो सबसे बड़ा अपराध करता है, वह परिवार, समाज और देश के लिए तो करता ही है, अपने प्रति सबसे अधिक अपराध करता है। और जो अपने प्रति ईमानदार न हो वह देश और समाज के प्रति ईमानदार हो ही नहीं सकता है। इस लिए वेद में सबसे पहला देश व समाज की प्रगति का सूत्र गाथा है माना वह सत्य का सार्वजनिक और वैयक्तिक जीवन में जीवन का आधार बनाना। छात्र यदि अपने शिक्षा और लक्ष्य के प्रति ईमानदार नहीं होगा तो वह छात्र नहीं कहा जा सकता है। इसी तरह समाज और देश के हर मनुष्य से यह आशा की जाती है कि वह अपने कर्त्तव्यों का पालन ईमानदारी और निष्ठा के साथ करें।

समाज और राष्ट्रोन्नति का दूसरा सोपान, सूत्र या तत्त्व है - उद्यम। उद्यम शब्द तुदादिगण में बृह् उद्यमने धातु से निष्पन्न होता है। यहां बृहत् का अर्थ उद्यम होता है। उद्यम किए बिना किसी कार्य की सिद्धि नहीं हो सकती। उद्यम को आर्य-संस्कृति का सूत्र भी कह सकते हैं। संस्कृत में उद्योग अर्थात् उद्यम को प्रमाण के साथ बहुत ही सुन्दर वर्णन किया गया है। "**उद्योगिनं पुरुष सिंहमुपैति लक्ष्मीः, दैवेन देयमिति कापुरुषाः वदन्ति। दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात् मशक्त्या, यत्ने कृते यदि न**

सिद्धयति कोऽत्रदोषः" अर्थात् लक्ष्मी, सम्पत्ति, समृद्धि और परिश्रम करने वाले उद्यमी पुरुष का ही वरण करती हैं। इसलिए आलस्य, प्रमाद छोड़कर पुरुषार्थ करना चाहिए। भाग्य के सहारे बैठने वालों को कभी कुछ प्राप्त नहीं होता है। वेद में उद्यम और पुरुषार्थ के बारे में बहुत ही प्रेरक संदेश दिया गया है, "**कुर्वन्नेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।**" अर्थात् काम करते हुए ही हर मनुष्य को सौ वर्षों तक जीने की इच्छा करनी चाहिए। इतना ही नहीं कर्म करने वालों को कर्मवीर कह कर पुकारा गया है, "**कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः**" यानी कृतित्त्व हमारे दाहिने हाथ में है, सफलता हमारे बाए हाथ में है। कहने का मतलब यह है कि पुरुषार्थ और उसके फल में उतनी ही दूरी है जितनी बाएं और दाहिने हाथ में।

अब हमें विचार करना चाहिए कि क्या हम समाज और देश के प्रति ईमानदार हैं ? क्या जिस कार्य को करने की हमारी ड्यूटी (कर्त्तव्य) है हम उसके प्रति मुस्तैद हैं ? हमारे अन्दर क्या देश और समाज के प्रति छल-कपट, चालाकी और झूठी शेखी बघारने की प्रवृत्ति तो नहीं है ? यदि है तो यह देश समाज के प्रति क्या छल, बेईमानी और धूर्तताई नहीं हुई ? इन्हीं दुर्व्यवहारी से बचते रहने के लिए हमारे ऋषि-मुनियों ने वेदों के माध्यम से हमें सजग किया है। इसके बावजूद भी यदि हमारे अन्दर अपने या सम्बन्धों के स्वार्थ में देश, समाज और संसार के प्रति सच्चे और कर्त्तव्यनिष्ठ नहीं हुए तो हमारा क्या भला हो सकता है ? भारत और दूसरे विकसित देशों में आज भी जो अन्तर दिखाई पड़ता है वह देश के प्रति कर्त्तव्यों का पालन न करने का है। उदाहरण के तौर पर छोटा-सा देश जापान आज विश्व का सबसे धनी देश माना जाता है। हम जानते हैं क्या, इसने यह कमाल कैसे कर दिखाया ? **जापान की प्रगति की वजह का जो मूल कारण है, वहां के लोगों का देश और समाज के प्रति कर्त्तव्यपालक होना। आज भी जापान का हर व्यक्ति अपनी ड्यूटी के अलावा दो घंटे देश के लिए देता है।** वहीं पर हम भारतवासी देश के लिए कितना समय देते हैं, बताने की आवश्यकता नहीं है।

भारत में उद्यम या पुरुषार्थ की जगह भाग्यवाद ने ले लिया है। आज भी अधिकांश लोग भाग्य का रोना रोते हैं। स्वामी विवेकानन्द कहते थे भाग्य का निर्माण ईश्वर नहीं, बल्कि कर्म के द्वारा होता है। यह हम क्यों नहीं विचार करते कि बिना हाथ से भोजन का कौर उठाए मुंह में नहीं जा सकता, तो बगैर पुरुषार्थ किए भला लक्ष्मी कैसे प्राप्त हो सकती है ? कामचोरी, आलस्य, प्रमाद और दूसरों के धन और सम्पत्ति चुराकर संसाधनों को बटोरने की यह वृति मनुष्य-वृति का सूचक नहीं, बल्कि राक्षसी-वृति का परिचायक है। मतलब देश और समाज को खुशहाल और प्रगतिगामी बनाने के लिए सच्चे उद्यम के अलावा और दूसरा कोई रास्ता नहीं है।

समृद्ध और खुशहाल राष्ट्र का तीसरा आधार 'ऋत' सत्य बताया गया है। संस्कृत व्याकरण के अनुसार 'ऋत' का अर्थ नियम होता है। वेद के मंत्र में ऋत का वर्णन इस प्रकार किया गया है। "**ऋतं च सत्यं चाभीद्धापत्त सोऽध्यजायत**" यानी ईश्वर ने अपने ज्ञानमय तप से ऋत और सत्य को उत्पन्न किया। ऋत प्रकृति का यह शाश्वत नियम है जिसका पालन करना उतना ही आवश्यक है जितना सत्य बोलना। यह सारी सृष्टि ईश्वरीय नियमों से ही संचालित हो रही है। ये ईश्वरीय नियम ही प्रकृति के नियम कहलाते हैं। इनके पालन करने से ही विश्व, देश और समाज का कल्याण और प्रगति हो सकती है। इन प्राकृतिक या ईश्वरीय नियमों का पालन न करने के कारण आज सकल विश्व में अनेक पर्यावरणीय, ब्रह्माण्डीय, सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, धार्मिक और शासन-व्यवस्था संबंधी समस्याएं पूरे मानव समाज के दुख और संताप का कारण बन गई है। इस लिए देश और समाज के हर मनुष्य का यह परम कर्त्तव्य बनता है कि वह अपने समाज, परिवार और देशहित में प्रकृति के शाश्वत नियमों का पालन करे। प्रकृति के शाश्वत नियम उदाहरण के रूप में समय पर सृष्टि की हर चीज कार्य कर रही है। सभी वस्तुएं अपने स्वभाव के अनुसार ही व्यवहार करता है। प्रकृति की हर वस्तु हर पल अपने कार्य यानी ड्यूटी में लगी हुई है। प्रकृति के हर पदार्थ में जो गुण है वह उसी के अनुसार व्यवहार करता है। इसके बारे में हमने क्या कभी विचार किया ? इनका मतलब यह होता है कि जैसे सृष्टि का हर कण अपने कार्य में निरन्तर लगा हुआ है और अपने स्वभाव के अनुसार व्यवहार करता है, उसी प्रकार से मनुष्य का स्वभाव मनुष्यता का ही होना चाहिए। जैसे सृष्टि की हर चीज समय से पाबंद है उसी तरह से हमें भी समय का पाबंद होना चाहिए। इस लिए 'ऋत' को राष्ट्रोन्नति का महत्वपूर्ण आधार माना गया है। इससे महज देशहित नहीं होता, बल्कि हर इंसान अपने जीवन के लक्ष्य को भी प्राप्त कर सकता है।

देशोन्नति का चौथा आधार तत्त्व है - तेजस्विता अर्थात् तेज। समाज के हर इंसान में तेजस्विता का होना बहुत

आवश्यक बताया गया है। केवल वेद में ही नहीं, बल्कि बौद्ध और सिख मतावलम्बी भी तेजस्विता को बहुत आवश्यक मानते हैं। तेजस्विता का साधारण रुप से जोश के साथ कार्य करना कह सकते हैं। बिना जोश के बड़ा-सा-बड़ा लक्ष्य पूरा नहीं किया जा सकता है। जोश ही आलस्य और प्रमाद को समाप्त करता है। जिस देश के नागरिकों में देश और समाज के प्रति जोश नहीं होता, वह समाज और देश झील की ही स्थिति में रह जाता है। मतलब जैसे झील का पानी स्थिर होता है, वही हाल देश का भी होता है। जोश दिलाते ही मनुष्य में एक उत्साह और चमक आ जाती है और उसमें संकल्प पैदा हो जाता है- अमुक कार्य करके ही दम लूंगा। बिना जोश के मनुष्य में एकरसता भी नहीं आती है।

दीक्षा देश समाज के प्रगति का महत्वपूर्ण पांचवां तत्त्व है। संस्कृत में दीक्ष धातु के कई मायने होते हैं। यहां पर दीक्षा का अर्थ व्रत या संकल्प लेना है। देश और समाजोन्नति के लिए शुभ संकल्प लेना ही राष्ट्र-दीक्षा कहलाती है। मतलब व्रत के द्वारा देश और समाज के मंगल कार्यों के लिए पवित्र मन से समर्पित हो जाना दीक्षा कहलाती है। छात्र अपने शुभ लक्ष्य के प्रति समर्पित हो जाए वह 'दीक्षा' है। छात्र जीवन में संयम, नियम और सत्य वाचन का व्रत लेते हुए अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्राणपान से लग जाना दीक्षा है। उसी प्रकार हर देशवासी को भी देशोन्नति के लिए व्रत लेकर अपने कर्त्तव्य के प्रति समर्पित हो जाना चाहिए। अभीष्ट की प्राप्ति तभी हो सकती है।

छठा तत्त्व समाजोन्नति का तप बताया गया है। तप को राष्ट्र की निधि कहा गया है। साधारणतौर पर तितिक्षा या सहन करना तप है। शास्त्र में कहा गया है, **"तपः स्वधर्म वर्तित्वम्"** और **"तपः स्वकर्म वर्तित्वम्"** अर्थात् सभी को अपने धर्म और कर्म का पूरी निष्ठा और सहिष्णुता के साथ पालन करना तप कहलाता है। देश में जो जिस कार्य को कर रहा है उसे बहुत ईमानदारी और परिश्रम के साथ करता रहे, यह उसका तप है। चाहे कितनी भी कठिनाई आए या चाहे जितना लोभ दिया जाए, उसे नजरअंदाज करके अपने कर्त्तव्यों का सम्यक् पालन करते जाए यह ही सांसारिक जीवन में तप है। जिस राष्ट्र में तपस्वी जन नहीं रहते वह राष्ट्र कभी भी खुशहाल हो ही नहीं सकता है।

सातवां राष्ट्रोन्नति का आधार या तत्त्व है-ब्रह्म। ब्रह्म को वेद में ज्ञान-विद्या कहा गया है। सब कुछ ठीक होते हुए भी यदि हमारे अन्दर ज्ञान की कमी है तो हम वह नहीं प्राप्त कर सकते जिसे प्राप्त करना चाहते हैं। विद्या शब्द विद् धातु से बना है। जिसका अर्थ होता है जानना। 'जानना' साधारण तौर पर बहुत गहरा नही लगता है, लेकिन जब कार्य और शिक्षा के लिए यह प्रयोग किया जा रहा हो तो यह बहुत गहराई ले लेता है। यह जानना कि मैं कौन हूँ ? यह जानना कि हमारे जीवन का लक्ष्य क्या है ? यह जानना कि देश और समाज के प्रति हमारे क्या कर्त्तव्य हैं ? इसकी जानकारी बिना विद्या-ज्ञान के क्या हो सकती है ? इसलिए इसे राष्ट्र का महत्त्वपूर्ण आधार माना गया है। विद्या का मतलब केवल किताबी ज्ञान नहीं है, बल्कि अपनी शारीरिक, मानसिक, आत्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तत्त्वों की ठीक जानकारी होना चाहिए। इससे हमारी सर्वोन्नति हो सकती है। इसके लिए तप की आवश्यकता पड़ती है, इसलिए ब्रह्म (विद्या) को भी राष्ट्रोन्नति का आधार माना गया है।

राष्ट्र और समाजोन्नति का आठवां तत्त्व यज्ञ बताया गया है। यज्ञ शब्द यजन धातु से बना है। जिसका अर्थ होता है करना। जैसे आमतौर पर यज्ञ का अर्थ हवन या अग्निहोत्र जाना जाता है। शास्त्र में यज्ञ का अर्थ देव पूजा, संगतिकरण और दान वर्णित है। देवपूजा का मतलब पूज्य का पूजनऔर अपूज्य का त्याग करना। संगतिकरण का अर्थ विभिन्न वर्गों और स्वार्थों का संतुलन और दान का अर्थ होता है - अपनी उपलब्धि में से देश के लिए बिना स्वार्थ के त्याग करना। समाज का आम आदमी किस तरह राष्ट्र-यज्ञ में अपनी आहुति दे सकता है और छात्र किस प्रकार राष्ट्र-यज्ञ सम्पन्न कर सकता है, विचार करना चाहिए।

- पता : टी-३३, ग्रीन पार्क मेन, नई दिल्ली-११००१६

गुरु मंत्र

चलोगे सत्य की राह। तो पूरी होगी चाह॥

अपने कर्त्तव्यों को पूरी ईमानदारी से निभाते रहें, यह सोचकर कि ऊपर वाला आपकी परीक्षा ले रहा है। ऊपर वाले पर विश्वास रखें। वह आपके विश्वास की पूरी लाज रखेगा। ऊपरवाला ईश्वर भी हो सकता है और आपके ऊपर का अधिकारी भी। यदि आप अपने अधिकारों का दुरुपयोग कर अपनों को लाभ पहुंचाते हैं, तो निश्चित ही आप पर पक्षपात के आरोप लगाते रहेंगे। ऐसे में सत्य की राह से भटकने का परिणाम आपको ही भुगतना पड़ेगा और आपके द्वारा अर्जित मान-सम्मान, प्रतिष्ठा सभी आपके हाथ से चले जाएंगे। तुम्हारे झूठ एक दिन तुम पर भारी न पड़ जाएं। इसलिए यदि **पूरी करनी हो चाह, तो चलो सत्य की राह।**

व्याख्यात्मक

यज्ञकर्त्ता का नाश नहीं होता

ले. मनुदेव 'अभय' विद्यावाचस्पति

ओ३म् । नू चित्स भ्रेषते जनो न रेषन्मनो यो अस्य घोरमा विवासात् ।
यज्ञैय इन्द्रे दधते दुवांसि क्षयत्स राय ऋतपा ऋतेजाः ॥ (ऋ. ७-२०-६)

चिन्तन सहित मंत्र व्याख्या - पूर्व जन्म सुसंस्कार, माता-पिता तथा गुरु द्वारा संस्कारित जन जब कोई भगवान के मार्ग पर चलने लगता है तब परमात्मा से विमुख संसार जन उसे डराते, धमकाते हैं। वे उसका ध्यान वहां से हटाकर कहते हैं - इस संसार में आये हो तो खूब खाओ, पियो और मौज उड़ाओ। प्रत्यक्ष को छोड़कर अप्रत्यक्ष अर्थात परोक्ष के पीछे क्यों भागते हो ? क्यों अपनी इस सुन्दरकाया और जवानी को क्यों नष्ट कर रहे हो। भोग, विलास, विषय-वासना, कामिनी-काञ्चिन से यौवन नष्ट नहीं, परन्तु विकास होता है। आधी छोड़, पूर को पाए, फिर कभी भूल कर न वापस आवे।

उपरोक्त भावों का दूसरा पक्ष यह भी है कि भोगवादी कभी भी मोक्षोपमुखी नहीं होते। भर्तृहरि के शब्दों में - भोगवादी भोगों को भोगता है, परन्तु भोग उसको भोगने लगते हैं और उसका सर्वतोभावन नाश हो जाता है। काम-क्रोध, लोभ-मोह, मद-मत्सर आदि काले सांप है, जो नित्य प्रति अपनी जहरीली फुंकार से मनुष्य को मूर्छित करते रहते हैं।

ऐसे भोगवादियों के संदर्भ में ठीक ही कहा गया है - पिता-माता, भ्रातर एनमाहुर्न जानीमो नयता बद्धमेतम्। पिता, मात, भाई कहते हैं - यह दुष्ट है, हम इसे नहीं जानते, इसे बांधकर ले जाओ। ऐसे दुष्टों के सगे संबंधी भी पराये बन जाते हैं। व्यसनी, भोगी को कोई अपना नहीं बनाता। व्यसनी के कष्टों का वर्णन करते हैं जिन्हें कहते हैं - ऐसे व्यक्ति ऋण के भार से दबा रहता है। वह डर का मारा रात के दूसरों के घर जाता है। ऐसे व्यक्ति अपनी सारी सम्पत्ति नष्ट कर लेता है। इसलिए ऐसे लोगों को सन्देश करते हुए ऋग्वेद कहता है -

मा नो धारेण चरताभि घुण्ण। (ऋ. १०.३४.१४)

धृष्टता करके, ठिठाई को सामने रखकर घोर आचरण मत करो। बुराई के मार्ग पर ठीठ लोग ही जाते हैं। व्यसनों के कारण नाश बताकर धन रक्षा का सच्चा, वास्तविक उपाय भी वेद बताता है -

यज्ञैर्य इन्द्रे दधते दुवंसि क्षयत्स रा ऋतपा ऋतना। अर्थात् जो यज्ञों द्वारा भगवान की सेवा पूजा करता है, वह ऋतरक्षक=धन रक्षक, ऋतेजा=धर्मपुत्र धनों को बसाता है।

धन चंचल है, रथ के पहिये के समान कभी ऊपर और कभी नीचे धूप-छांव के समान चलायमान तथा चलती-फिरती लक्ष्मी है। संसार में कई रोड़पति करोड़पति बनते देखे गये हैं और कई करोड़पति रोड़पति या शरणार्थी बनकर दुःखी देखे गये हैं। धन केवल साधन है। इसे अर्थ कहा जाता है। यह ठीक है कि अर्थ के बिना सब व्यर्थ है, परन्तु यही अर्थ अनेकों अनर्थों की जड़ है। यही अर्थ जीवन को स्वर्ग बनाता है और इसी अर्थ के द्वारा मनुष्य यहीं नर्क भोगता है।

कहते हैं - धन कमाने में कष्ट, रक्षा करने में कष्ट, चोरी का भय, हत्या का भय अर्थात् प्रारम्भ में कष्ट और अंत में कष्ट। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि हम अर्थ से दूर रहें नहीं, वेद में रयि, याने धन और अर्थ की महिमा का गान किया गया है। वैदिक दृष्टि से सौ हाथ कमाओ और हजारों हाथों से बांटों। निर्धनों को जीवित रहने का कोई अधिकार नहीं। इसकी एक विधि है - धर्म मय साधनों से खूब धन कमाओ। प्रत्येक आर्य प्रातःकाल प्रार्थना करता है -

इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि, चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वम् अस्मे। पोषं रयीणाम् अरिष्टिम् तनूनाम्, स्वादमानम वाचः सुदिनत्वमह्नाम्। (ऋग्वदे २-२-६) अर्थात् हमें श्रेष्ठ धन, दक्षता एवं बल और सौभाग्य दो, ऐश्वर्यों की पुष्टि शरीर की निरोगता एवं अक्षीणता वाणी की मधुरता और दिनों की सुदिनता प्रदान करे। इस प्रकार वेद में धन को समस्त ऐश्वर्यों में श्रेष्ठ कहा है। लेकिन ध्यान रखो - **त्वदीयं वस्तु सर्वात्मन् तुभ्यमेव समर्पये।** तेरी वस्तु प्रभु। तुझे ही अर्पण करता हूँ। इस भावना से भगवान के निमित्त दान करते हैं, ऐसे लोग सदा सुखी रहते हैं।

पता : सुकिरण, अ/१३, सुदामा नगर, इन्दौर ४५२००९ (म.प्र.)

अभिमान भगवान से दूर करता है और दैन्य भगवान के चरणों में पहुँचा देता है।

गवेषणात्मक

आज से बढ़कर था प्राचीन विज्ञान

- डॉ. महावीर "नीर" विद्यालंकार

भारत के ३४वें स्वतन्त्रता दिवस की पुनीत बेला में स्व. प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने विश्व में महाप्रलयंकारी विस्फोटक पदार्थों के निर्माण एवं संग्रह की ओर इंगित कर, अमरीका द्वारा न्यूट्रोन बम बनाने की घोषणा की ओर विश्व का ध्यान आकृष्ट किया था। आज विज्ञान चरमोत्कर्ष पर पहुंचने को उत्सुक है। यह (पदार्थ-विद्या) विज्ञान संहारक शक्ति का उत्पादन भी कर रहा है और मनुष्य की सुख-सुविधा के अनेक साधन जुटाने में भी लगा है।

इतना होने पर भी आज विश्व मौत के कगार पर खड़ा है। मानव आधुनिकतम शास्त्रों की विभीषिका को त्रस्त है। हिरोशिमा और नागासाकी के भयंकर दृश्य का स्मरण कर यकायक रोंगटे खड़े हो जाते हैं। आज बटन दबाते ही भयंकर विस्फोटक पदार्थों से लैस राकेटयान, विमान, शत्रु पक्ष का महाविनाश करने में सक्षम है। विद्वानों का मत है कि इन विस्फोटक पदार्थों से समस्त संसार को तीन बार ध्वस्त किया जा सकता है। वस्तुतः युद्धों की डरावनी-काली क्रूर छाया किसी के लिए कल्याणकारिणी नहीं हुआ करती है। विनाश के पश्चात् पश्चाताप की ज्वालाओं से मन का सुकोमल तन्तु जला करता है।

आज से हजारों वर्ष पूर्व भी महाभारत के संग्राम की अन्तिम परिणति पश्चाताप में ही हुई थी। विनाशकारी युद्धों का परिणाम ऐसा ही होता है। महाभारतीय इतिहास वास्तव में गृह कलह से उत्पन्न युद्ध का इतिहास है। कौरवों और पाण्डवों के इस भयानक युद्ध में उनके अपने सम्बन्धियों और उनसे स्नेह व शत्रुता रखने वाले अनेक देशों के राजाओं ने साथ दिया था। यह युद्ध १८ दिन में १८ अक्षौहिणी (११ कौरवों ७ पाण्डवों की) सेनाओं के संहार के साथ समाप्त हुआ। केवल भरत खण्ड के दो वीर ऐसे थे, (राजा रुक्मी और बलराम हलधर) जो इस युद्ध से अलग रहे।

साधारणतः प्रजाजनों का अनुचित संहार न हो, तदर्थ कौरवों और पाण्डवों ने हस्तिनापुर से दूर कुरुक्षेत्र की भूमि में पश्चिमाभिमुख और पूर्वाभिमुख होकर जब युद्ध की इच्छा से डेरे डाल दिए तब दोनों ही ओर के राज्य-प्रत्याशियों ने अपनी-अपनी वीर मण्डली के चुने हुए योद्धाओं से युद्ध प्रसंग में सभाएँ की। महाभारत के उद्योग पर्व में वर्णित यह प्रसंग इतना सटीक, इतना सुन्दर तथा उस समय के वीरों के चरित्र तथा वैज्ञानिक उन्नति का इतना साकार चित्र प्रस्तुत करता है कि पढ़ते ही बनता है।

कौरव पक्ष की रात्रिकालीन सभा :- अपने-अपने स्थानों पर विराजमान पितामह भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, अश्वत्थामा और कर्ण से महाराज दुर्योधन ने सामयिक एवं सामरिक प्रश्न करते हुए कहा कि आप सभी महान् पराक्रमी हैं, दिव्यास्त्रों के ज्ञाता हैं, युद्ध विद्या में निष्णात है - "आपसे यह जानना चाहता हूँ कि आप कितने-कितने समय में पाण्डव को युद्ध में परास्त कर सकते हैं।" तब सबसे पूर्व वयोवृद्ध भीष्म पितामह अपने बल और शास्त्रास्त्र ज्ञान के आधार पर बोले कि मैं १ मास में पाण्डवों को परास्त कर सकता हूँ। तदनन्तर द्रोणाचार्य बोले कि मैं भी अपने बल एवं शास्त्रास्त्र ज्ञान के आधार पर दो मास में पाण्डव वीरों को परास्त कर सकता हूँ। कृपाचार्य बोले राजन्! द्रोणपुत्र अश्वत्थामा ने अपने बल एवं युद्ध ज्ञान के अनुसार १५ दिन में पाण्डव पक्ष को मार गिराने की बात कही। अन्त में दिव्यास्त्रवेत्ता कर्ण ने कहा मैं पांच दिन में पाण्डवों सहित समस्त शत्रु दल को यमालय भेज दूंगा।"

इस प्रकार कौरव वीरों के मध्य इस विचार-विमर्श का पता जब महाराज युधिष्ठिर को हुआ तो चिन्तित होकर उन्होंने भी पाण्डव वीरों की सभा बुलाई।

पाण्डवपक्षीय वीर सभा :- अब पाण्डव-पक्ष की वीर-सभा को संबोधित करते हुए महाराज युधिष्ठिर ने समस्त वीरों के समक्ष कहा कि वीरवीरों! कल युद्ध होने वाला है। बताईये आप लोग कितने समय में कौरव दल का संहार कर सकते हैं। क्योंकि दिव्यास्त्रवेत्ता कर्ण का कहना है कि वह ५ दिन में भूमि को पाण्डव रहित कर देगा। युधिष्ठिर के

ऐसा कहने पर पाण्डव वीर सभा स्तब्ध रह गयीं सब वीर एक दूसरे का मुंह ताकने लगे।

तब युधिष्ठिर को चिंतित व आतुर देखकर चारों ओर दृष्टिपात कर कुन्तीपुत्र अर्जुन खड़े हुए और इस प्रकार बोले राजन्! यदि आप मुझे विशेष आज्ञा दें तो मैं एक क्षण में समस्त भूमण्डल समेत इन वीरों को नष्ट कर सकता हूं। यह मैं क्यों कर सकता हूँ, इस तथ्य का ज्ञान न तो पितामह भीष्म को है, न गुरु द्रोणाचार्य को और न ही कृपाचार्य को। फिर अश्वत्थामा और कर्ण को तो इस बात का पता कहां से होगा ? राजन्! मेरे पास महाविनाशकारी पाशुपतास्त्र है। जो कि मुझे भव (शिव) ने प्रदान किया था और आदेश दिया था -

ददामि ते द्रस्त्रं दयितामहं पाशुपत विभो।
समर्थो धारणो मोक्षे संहारे चासि पाण्डव ॥

वनपर्व ४०/१५

नैतद् वेद महेन्द्रोऽपि न यमो न च यक्षराद्।
वरुमोऽप्यथवा वायुः कुतो वेत्स्यन्ति मानवाः ॥ ४०/१६
न त्वेतत् सहसा पार्थ मोक्तव्यं पुरुषे क्वचित्।
जगद् विनाशयेत् सर्वमल्पतेजसि पञ्चतितम् ॥ ४०/१७

इसके प्रयोग से सब कुछ नष्ट-भ्रष्ट किया जा सकता है, किन्तु युद्ध विधान के अनुसार विपक्षी जिस प्रकार के शास्त्रास्त्रों का प्रयोग करता है उसी प्रकार के अस्त्रों का प्रयोग करना मुझे अभीष्ट है। अतः जैसा शत्रु-पक्ष युद्ध करेगा उसी के अनुसार लड़ाई होगी। यथा- अर्जुन युधिष्ठिर से कहते है -

अपैतु ते मनस्तापो तथा सत्यं ब्रवीम्यहम्।
हन्यामेकरथेनैव वासुदेव सहायवान् ॥

उद्योगपर्व अ. १९४/श्लो. १० से १५

सामरानपि लोकांस्त्रीन् सर्वान् स्थावरजङ्गमान्।
भूतं भव्यं भविष्यं च निमेषादिति मे मतिः ॥१२॥
यत् तद् घोरं पशुपतिः प्रादादस्त्रं महन्मम।
कैराते द्वन्द्वयुद्धे तु तदिदं मयि वर्तते।
तन्न जानाति गाङ्गेयो न द्रोणो न च गौतमः।
न च द्रोणसुतो राजन् कुत एव तु सूतजः ॥१४॥
न तु युक्तं रणे हन्तुं दिव्यैरस्त्रै प्रथग जनम्।
आर्जवेनैव युद्धेन विजेष्यामो वयं परान् ॥१५॥

इस प्रसंग को यहां उद्धृत करने का अभिप्राय इतना ही है कि महाभारत काल में विज्ञान की महती उन्नति हो चुकी थी। सुख-सुविधाओं के लिए विज्ञान ने जहाँ अनेक साधन जुटाए थे वहां आधुनिक एटमबम का निर्माण हो चुका था। ये अस्त्र शत्रु सेनाओं को ही नहीं अपितु दूर दूर तक के प्रदेशों को भी तबाह करने में सक्षम थे। इन्हीं अस्त्रों को उस समय दिव्यास्त्र कहा जाता था। क्योंकि साधारण शास्त्रास्त्रों की अपेक्षा इनकी संहारक शक्ति विलक्षण थी दिव्य थी, आज के एटम आदि भी कोई साधारण अस्त्र नहीं है अपितु विलक्षण है, दिव्य हैं।

इन दिव्य अस्त्रों की प्रयोग विधि भी अनोखी होती थी। महाभारत काल में इन दिव्यास्त्रों के जानने वाले को अप्रतिमवीर कहा जाता था। इन अस्त्रों की प्राप्ति भी कोई साधारण बात नहीं थी अपितु जिस प्रकार आज के वैज्ञानिक दिन-रात इसके लिए तपस्या करते हैं, दूसरे देशों में जाकर टेकनीक सीखते हैं, वैसे ही उस भूतकाल में जिज्ञासु ब्रह्म लोक, शिव लोक, इन्द्र लोक, पाताल लोक आदि (लोक) स्थानों में जाकर इनका ज्ञान प्राप्त करते थे। महाभारत में आगामी युद्ध की आशंका कर वन पर्व में युधिष्ठिर अर्जुन व भीम को अस्त्र विद्या प्राप्ति के लिए उत्तरी एवं दक्षिणी प्रदेशों में भेजते हैं। महाभारत में दिव्यास्त्रों के विषय में निम्न श्लोक देखिए -

आग्नेयं वारुणं सौम्यं वायव्यमथ वैष्णवम्।
ऐन्द्रं पाशुपतं ब्राह्मं पारमेष्ठ्यं प्रजापतेः ॥
धातुस्त्वष्टुश्च सपितुर्वैवस्वतमथापि वा ॥

१२१/४०.४९ भीष्मपर्व

अर्थात् आग्नेय, वारुण, सौम्य, वायव्य, वैष्णव, ऐन्द्र, पाशुपत, ब्राह्म, पारमेष्ठय, प्राजापत्य धात्र, त्वाष्ट्र सावित्र और वैवस्वत-ये दिव्यास्त्र कहे गये हैं। इसी प्रकार एक दूसरे की काट करने वाले अस्त्रों का प्रयोग भी उस समय होता था। श्रीमद् भागवत पुराण में उनका इस प्रकार वर्णन है -

ब्रह्मास्त्रस्य च ब्रह्मास्त्रं वायव्यस्य च पार्वतम्।
आग्नेयस्य च पार्जन्यं नैजं पाशुपतस्य च ॥

मोहयित्वा तु गिरिशं जृम्भणास्त्रेण जृम्भितम् ॥

भागवत स्क. १०/अ. ६३। श्लो. १३-१४॥

अर्थात् ब्रह्मास्त्र की काट ब्रह्मास्त्र। आग्नेयस्त्र की काट पर्जन्यास्त्र। वायव्यास्त्र की काट पार्वतास्त्र। पाशुपतापास्त्र की काट नारायणास्त्र। इसके अतिरिक्त तिमिरास्त्र की काट भास्करास्त्र तथा मोहनास्त्र की काट प्रज्ञास्त्र थे।

उस समय श्रीकृष्ण व अर्जुन ही ऐसे वीर थे जो इन अस्त्रों के जानकार थे। आज भी जिन राष्ट्रों के पास विनाशकारी, प्रलयंकारी बम, विद्यमान है। वे उनका प्रयोग करने में महान् अनिष्ट की आशंका से उतावली नहीं करते। इसलिए जब भी किन्ही दो देशों में युद्ध होता है। तो वे इन भयंकर (दिव्यास्त्रों) का प्रयोग न कर आग्नेयास्त्र, ऐन्द्रास्त्र आदि के रुप में हल्के बमों का प्रयोग ही करते हैं।

इस सन्दर्भ में महाभारत में एक प्रसंग आता है - द्रोणाचार्य जब युद्ध में पाण्डव वीरों से तंग आ गये तो उन्होने महाविनाशकारी शक्तिशाली अस्त्र उठाकर उसका प्रयोग करना चाहा। उस अस्त्र प्रयोग से भयंकर विनाश होने की आशंका थी। तभी वहां युद्ध-नियमों का उल्लंघन करने के कारण द्रोण के विरोध में कुछ वीरों ने कोलाहल मचा दिया। ब्राह्मण होते हुए भी क्षत्रिय धर्म में लगे एवं भयंकर अस्त्र का प्रयोग करने को उद्यत द्रोण की बड़ी भर्त्सना की। उन्हें लज्जित किया तब द्रोण शास्त्रास्त्रों को छोड़ रथ में बैठ गए। क्योंकि युद्ध में साधारणजनों को दिव्यास्त्रों से मारना कदापि उचित नहीं समझा जाता था। यथा- **न तु युक्तं रणे हन्तुं दिव्यस्त्रैः पृथग् जनम्।**

शास्त्रों के सम्बन्ध में महाभारत में व भागवत में बहुत कुछ आया है। विद्वान् यदि खोज करें तो बड़े-बड़े तथ्य हाथ लग सकते हैं। सब जानते हैं कि आग जलाने वाली गैस आक्सीजन और बुझाने वाली गैस नाइट्रोजन होती है। हाईड्रोजन+आक्सीजन के संयोग से जल बनता है। उस समय के (पदार्थ विद्या) विज्ञान के विज्ञ इन तथ्यों से परिचित थे। तभी वे ऐसे अस्त्रों का निर्माण कर सके। आज भी कारखानों में आग बुझाने वाली गैस के सिलिण्डर लटके मिलेंगे। योगिराज श्रीकृष्ण चन्द्र के चक्र-सुदर्शन अस्त्र को भी वैज्ञानिक दृष्टि से परखें तो तथ्य प्राप्त हो सकता है. वृत्त (घेरे या चक्र) की विलक्षणता यह है कि वह तीव्र गति से घूमकर वापिस आ जाता है। यदि सर्कस में - अपने किसी व्यक्ति को गोल-टोप अथवा रस्सा घुमाते हुए देखा होगा तो अभिप्राय समझ में आ सकता है। कोई भी विद्या हो, इस अभ्यास से ही फलवती या सिद्ध होती है। आंखों के अभ्यास में भी यह गुर है।

बलराम जी को 'हलधर' कहा जाता है। यह उन्हें जानने का एक इंगित या प्रतीक है। वस्तुतः बलराम **'डायनामाइड'** विद्या के पारखी थे। आज भी सेना में इस विद्या के जानकारों की टुकड़ी अलग होती है। जो युद्ध क्षेत्र में या शान्तिपूर्म कार्यों के लिए धरती में विस्फोटक पदार्थ रखकर किसी स्थान को उड़ाने या समतल करने में सहयोग करती है। श्रीमद्‌भागवत में आता है कि जब बलराम जी कौरवों से कुपित होकर अपने हल की लोक से खनन कर विस्फोटक पदार्थ रखकर खींचने लगे (विस्फोट) करने लगे तो हस्तिनापुर नगरी ऐसे डोल उठी जैसे नाव जल में डोल उठती है। विस्फोट से धरती में कम्पन साधारण सी बात है। श्लोक पढ़िये, गुनिए व संगति परक अर्थ लगाइये -

अद्याहं निष्कौरवीं पृथ्वीं करिष्यामीत्यमर्षितः।
गृहीत्वा हलमुत्तस्थौ दहन्निव जगत्त्रयम् ॥

स्क. १०। अ ६८। श्लो. ४०

लाङ्गलाग्रेम नगरमुद्विदार्य गजाह्वयम्।
विचकर्ष स गङ्गायां प्रहरिष्यन्नमर्षितः ॥

स्क. १० अ, ६८, ६१

जलयानमिवाघूर्णं गङ्गायां नगरं पतत्।
आकृष्यमाणमालोक्य कौरवाः जातसम्भ्रमाः ॥

स्क. १० अ, ६८, ४२

इस प्रकार हमारी प्राचीन (पदार्थ विद्या) विज्ञान अनेक ग्रन्थों में बिखरा पड़ा है। ज्यों-ज्यों आधुनिक विज्ञान हमारे सामने कोई आविष्कार करता है तो हमारी दृष्टि इन खण्डों पर भी आनायास पड़ जाती है। वस्तुतः यदि हम इन बातों को प्राचीन गपोड़े न मानकर आधुनिक विज्ञान के बढ़ते हुए प्रभाव क्षेत्र में समझने की कोशिश करें तथा संगतिपरक अर्थ लगायें तो कुछ प्राप्ति हो सकती है। इसी

प्रकार हमारे प्राचीनमत ग्रन्थ वेदों में भी इन दिव्यास्त्रों का वर्णन होता है।

संस्कृत साहित्य में 'उत्तररामचरित' नाम का महाकवि भवभूति का नाटक है। उसमें 'लव' द्वारा 'जृम्भकास्त्र' का प्रयोग मिलता है। इस अस्त्र के प्रभाव से समस्त सेना स्थिर हो जम्भाई लेने लग जाती थी। महाभारत में और भागवत में इस 'जृम्भणास्त्र' कहा है। विराट पर्व में जब उत्तर ने कौरव सेना के विविध रंग-बिरंगे वस्त्र प्राप्त करने की बात कही तब अर्जुन ने मोहनास्त्र का प्रयोग कर सबको अचेत कर डाला। उत्तर ने रंग बिरंगे वस्त्र उतार लिए। परन्तु अचेत करके शत्रु को कत्ल करने का विधान युद्ध में नहीं था।

इस प्रकार दिव्यास्त्रों की चर्चा के पश्चात् महाभारत में रथों या वाहनों की दिव्यता व विलक्षणता का वर्णन भी मिलता है। पाण्डवों के शस्त्रों तथा रथों आदि की उत्कृष्टता की बात सुनकर दुर्योधन भी कहता है कि मेरे यहां ऐसे वैज्ञानिक हैं जो जल, वायु और पृथ्वीं तीनों पर रथों का समान रुप से स्तम्भन कर सकते हैं। यथा -

स्तभितास्वप्सु गच्छन्ति मया रथपदातयः ।
देवसुराणां भावनामहमेकः प्रवर्तिता ॥ उद्योग पर्व ६१/१४
अक्षौहिणीभिर्यान् देशान् यामि कार्येण केनचित् ।
तत्रश्वा मे प्रवर्तत्र यत्राभिकामये ॥ ६१/१५ ॥

अर्जुन के विशाल एवं दिव्य रथ की चर्चा भी यहां करना अप्रासंगिक न होगा। आधुनिक युग में हम शक्ति या पावर की तुलना करते हुए कहते हैं कि इसमें इतने (हार्स पावर) अश्वशक्ति की शक्ति है। तो कुछ ऐसा ही यहां प्रतीत होता है। अर्जुन का रथ कोई साधारण रथ नहीं था, वह अन्य रथों से विशिष्ट या वह, जल, थल व नभ मार्ग में अप्रतिहत गति से आ जा सकता था। उसके ध्वज में जो 'एरियल' लगा था वह बहुत बड़ा था। उसमें ऐसी दिव्यता थी कि उसे सारे युद्ध-क्षेत्र का ज्ञान रहता था। उसके उस रथ में १०० अश्वों की शक्ति बराबर बनी रहती थी। विद्वान वैज्ञानिक पढ़े और विचार करें। यथा -

देवैर्हिं सम्भृतो दिव्यो रथो गाण्डीवधन्वनः ।
न स जेयो मनुष्येण मा स्म कृढ़ध्वं मनो युधि ॥

उद्यो. पर्व ५७ अ, श्लो. ६२

वस्तुतः हमारी अल्प बुद्धि के अनुसार ये दिव्य गुण युक्त देव महान् वैज्ञानिक ही थे। इसी सन्दर्भ में यहां तीन नाम आये हैं। विश्कर्मा, त्वष्टा व प्रजापति। इन तीनों ने मिलकर अर्जुन के रथ को सजाया, संवारा। ये तीन क्रमशः शिल्पकार, इंजिनियर व विज्ञानवेत्ता समझे जा सकते हैं। विद्वान् विचारें। आगे अर्जुन के रथ व ध्वज आदि का विस्तृत वर्णन पढ़िए -

ध्वजं हि तस्मिन् रूपाणि, चक्रस्तु देवमायया ।
महाघनानि दिव्यानि, महान्ति च लघूनि च ॥
सर्वा दिशो योजनमोत्रमन्तरं
स तिर्यगूर्ध्वं च रुरोध वैध्वजः ।
न सज्जतेऽसौ तरुभिः संवृतोऽपि,
तथा हि पाया विहिता भौमनेन ॥
यथाग्निधूमो दिवमेति रुद्ध्वा,
वर्णान् विभ्रत् तैजसांश्चित्ररुपान् ।
तथा ध्वजो विहिनतो भौमनेन,
न चेद् भारो भविता नोत रोधः ॥
श्वेतास्तस्मिन् वातवेगाः सदश्वा,
दिव्यायुक्तश्चित्ररथेन दत्ताः ॥
भुव्यन्तरिक्षे दिवि वा नरेन्द्र,
येषां गतिर्हीयते नात्र सर्वा ।
शतं यत् तत् पूर्यते नित्यकांल,
हतं हतं दत्तवरं पुरस्तात् ॥ उद्योग पर्व ५६/८, १०, १२, १३

इस प्रकार उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर महाभारतीय दिव्यास्त्रों एवं रथों के एक काल्पनिक स्वरुप को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में कुछ साकार रुप दिया जा सकता है। विद्वान् वैज्ञानिक ही इस विषय में खोज एवं शोध कर सकते हैं।

पता- वैदिक संग्रहालय (वेद-मंदिर परिसर),
गुरुकुल कांगड़ी वि.वि. हरिद्वार (उ.रां.)

त्याग में ही शान्ति है और जहां शान्ति है वहीं सुख है।

विचारात्मक हे मानव ! नारी के सम्मान में जरा आँखे खोलो

- **विवेक प्रिय आर्य**, मंत्री आर्यवीर दल मथुरा (उ.प्र.)

वर्तमान समय में ऐसे भयंकर-भयंकर पाप हो रहे हैं कि सुनकर रोंगटे खड़े हो जाएँ, आँखें डब-डबा जायें, हृदय द्रवित हो जाये। अरे राम ! कितना घोर अन्याय, घोर पाप आज समाज में अधिकांश लोग कर रहे हैं। लेकिन समाज के लोगों का ध्यान उधर नहीं जाता है कि हमारे वेद, शास्त्र, गीता, रामायण, महाभारत आदि ग्रन्थों में इस मानव शरीर को प्राप्त करना सबसे दुर्लभ बताया गया है। रामचरित मानस के उत्तर कांड में एक संवाद आता है, जिसका नाम काक भुशुण्ड और गरुड़ संवाद है। वहां दो विद्वान बैठकर आपस में बात कर रहे हैं, पहला व्यक्ति प्रश्न करता है कि बताओं संसार में ऐसा कौन सा चोला है, शरीर है, योनि है जो परमात्मा की भक्ति करने के बाद बड़ी मुश्किल से प्राप्त होती है। तो तुलसीदास जी ने अपने रामचरित मानस के उत्तर कांड में एक चौपाई में इस प्रश्न को उठाया है -

प्रथम कहूं नाथ मम धीरा।
सबसे उत्तम कवन शरीरा॥

अर्थात् वह विद्वान् पूछता है कि संसार में ऐसा कौन सा चोला है जो बड़ी मुश्किल से प्राप्त होता है तो उत्तरकाण्ड में ही तुलसीदास जी ने इसका उत्तर देते हुए लिखा है -

नर तन सम नहिं कोहि देही।
चीव चराचर जांचत जेही॥

गोस्वामी तुलसीदास जी इस शरीर की प्रशंसा करते नहीं थकते और आगे लिखते हैं कि -

छिति जल पावन गगन समीरा।
पंच रचित अति अगम शरीरा॥

और आगे इसी प्रसंग में काक भुशुण्डिजी मनुष्य शरीर की प्रशंसा करते हुए कहते हैं -

तलऊ न तन निज इच्छा मरना।
तन विनु वेद भजन नहिं वरना॥

भगवान श्रीकृष्ण ने गीता के अंदर शरीर की प्रशंसा करते हुए लिखा कि -

दुर्लभो मानुषो देहो देहिना क्षणभंगुरः।

और महाभारतकार महर्षि व्यास जी ने शरीर रचना को सर्वश्रेष्ठ बताते हुए लिखा है -

नाहि मानुषात् श्रेष्ठतरं कश्चित्।

अर्थात् मनुष्य से श्रेष्ठ कोई योनि नहीं है। वेद में मानव शरीर को परमात्मा से मिलने का साधन माना है -

इयं ते यज्ञीया तनूः (यजु.)

इसी की पुष्टि तुलसीदास जी एक जगह और करते हैं -

साधन धाम मोक्षकार द्वारा।
धानि न जेहि परलोक सिधारा॥

शरीर धर्म है, सद्गुण है। ऐसे मनुष्य शरीर के आरंभ को ही खत्म कर देना, काट देना, कितना घोर अपराध है, कितना अन्याय है, कितना पाप है। मेरे मन में बड़ा दुःख हो रहा है, जलन हो रही है पर क्या करूँ ? जिस मनुष्य शरीर से परमात्मा की प्राप्ति हो जाये, उस मनुष्य शरीर को पैदा ही नहीं होने देना, नष्ट कर देना पाप की आखिरी हद है। किसी जीव को मनुष्य शरीर प्राप्त न हो जाये, किसी का कल्याण न हो जाये, उद्धार न हो जाये, इसलिए भ्रूण हत्या करके नष्ट कर देना है। हमें पाप भले ही लगे, हम नरक में भले ही जाये पर किसी जीव को कल्याण का मौका नहीं देना है।

उस समय पाण्डव वन में रहते थे उस समय द्रौपदी ने युधिष्ठिर से प्रश्न किया कि महाराज आप धर्म को छोड़कर एक पांव भी आगे नहीं रखते, किसी का भी अनिष्ट करता है, वह दुर्योधन खूब मौज कर रहा है, राज्य कर रहा है तो धर्म कर्म कुछ है कि नहीं ? ईश्वर कोई न्याय करता है कि नहीं ? युधिष्ठिर ने कहा कि देवी तेरे भीतर यह बात कैसे पैदा हो गई है, जो अपनी सुख सुविधा के लिए धर्म का पालन करता है वह धर्म के तत्व को नहीं जानता। धर्म का तत्व तो वह जानता है जो कष्ट पाने पर भी धर्म का त्याग नहीं करता। धर्म का महत्व है, सुख सुविधा का नहीं। सुख सुविधा का महत्व तो पशुओं को भी है। मैं सुख सुविधा

पाने के लिए धर्म का पालन नहीं करता।

विचार करें जब धर्म का पालन अपनी सुख सुविधा के लिए नहीं किया जाता तो फिर उस सुख सुविधा के लिए भ्रूण हत्या में भी विशेषकर गर्भ में स्थित कन्या को मार देते हैं, काट देते हैं, इससे भयंकर और पाप क्या होगा। संसार के लोकाचार में कन्या से अधिक लड़के को अधिक महत्व दिया जाता है लेकिन हमारे धर्मग्रन्थों में मातृशक्ति का दर्जा पिता से हजार गुना अधिक बताया है।

सहस्रतु पितृन्माता गौरवेणातिरिच्यते। (मनु.)

साधारण बोलचाल में भी पहले मां का नाम लिया जाता है - सीताराम, लक्ष्मीनारायण, गौरीशंकर आदि। प्रत्येक पुरुष वर्ग को विचार करना चाहिए कि हम सब माँ की कोख से आये हैं, बाप की कोख से नहीं। सबने मां का दूध पिया है, बाप का नहीं। मां के स्नेह, प्यार से बच्चे का जो पालन होता है, वह पिता के स्नेह से नहीं। माँ की बड़ी विलक्षण महिमा है। आप अपने सुख सुविधा के लिए लोभ में आकर मातृशक्ति का नाश करते हैं, कन्या को पेट में ही मार देते हो यह बड़ा पाप है। मातृशक्ति का इतना बड़ा अपमान हो नहीं सकता। गर्भ में जो बच्ची है, वह मातृशक्ति है, उस मातृशक्ति का गर्भ में ही निवारण कर दोगे, उसे जन्म ही नहीं लेने दोगे तो कहाँ से जन्मोगे ? किसका दूध पिओगे ? गोदी कहां से लाओगे ? किस जगह प्यार पाओगे ? कौन हृदय से लगायेगा ? आजकल स्त्री-पुरुष के समान अधिकार की बात कही जाती है परन्तु वास्तव में स्त्रियों का समान अधिकार नहीं हो सकता प्रत्युत उनका तो दर्जा बहुत ऊँचा है। क्योंकि यह माँ है, ईश्वर के बाद दूसरा अगर किसी का स्थान है तो वह मां का है। साधुओं के बहुत मकान होते हैं पर वह घर नहीं कहलाते। घर तो स्त्री के कारण ही कहलाता है। इसलिए महर्षि व्यास जी महाभारत में लिखते हैं -

न गृहं गृहमित्याहुगृहिणी गृहमुच्यते।

अर्थात् ईट, पत्थर आदि से बने घर का नाम घर नहीं है। अपितु गृहिणी ही घर कहलाती है। जरा आँख खोलो-नारी के सम्मान के लिए महाभारत का युद्ध हुआ, नारी जाति की रक्षा के लिए ही श्रीराम ने रावण से युद्ध किया, नारी जाति के सम्मान के लिए ही भीष्म जी ने अपने प्राण त्याग दिये पर शिखण्डी पर बाण नहीं चलाया। परन्तु आज नारी को, मातृशक्ति को नष्ट करके उसको केवल भोग्य वस्तु बनाया जा रहा है। ऐसा घोर पाप मत करो। पाराशर स्मृति में लिखा है -

श्रूयतां धर्म सर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्॥

अर्थात् धर्म के सर्वस्व को सुनो और सुनकर उसे धारण करो। जो आचरण अपने से प्रतिकूल हो उसको दूसरों के प्रति मत करो। कोई आपकी उन्नति रोक दे, पढ़ना रोक दे, आपका जन्म रोक दे, आपका बढ़ना रोक दे, आपका भजन ध्यान रोक दे, आपके ईष्ट की प्राप्ति रोक दे तो उसका पाप लगेगा या पुण्य लगेगा ? जरा विचार कीजिए कोई जीव मनुष्य जन्म में आ रहा है, उसमें रुकावट डाल देना, उसको जन्म ही नहीं लेने देना कितने बड़े पाप की बात है। हाँ आप ब्रह्मचर्य का पालन करो तो आपका शरीर भी ठीक रहेगा और पाप भी नहीं लगेगा। परन्तु भोग तो भोगेंगे, शरीर का नाश तो करेंगे पर संतान पैदा नहीं होने देंगे। यह बड़े भयंकर पतन की बात है। छोटे-छोटे जीवों को आप मार देते हो, वे बेचारे कुछ नहीं कर सकते, परन्तु क्या भगवान के यहां न्याय नहीं है ? निर्बल को नष्ट कर देना कितना बड़ा पाप है, महाभारत की कथा आप सुनो और पढ़ो। युद्ध में दूसरे को चेताते हैं कि सावधान हो जाो मैं बाण चलाता हूं। शत्रु पर बाण भी चलाते हैं तो पहले उसे सावधान करते हैं, फिर बाण चलाते हैं। जो बेचारे कुछ नहीं कर सकते, अपना बचाव भी नहीं कर सकते और आपका अनिष्ट भी नहीं कर सकते ऐसे शूद्र जंतुओं को नष्ट कर देना बड़ा भारी अन्याय अत्याचार है।

विचारशील पुरुषों ! विचार करो कि आप अपना बुरा नहीं चाहते हो तो दूसरों का बुरा करने का आपका क्या अधिकार है ? अतः किसी के भी सुख में बाधा मत डालो, किसी के भी जन्म में बाधा मत डालो, किसी का भी भला करने में बाधा मत डालो। जो बात आप अपने लिए नहीं चाहते उसको औरों के लिए भी मत करो। यह सबसे पहला

धर्म है। जो जीव असमर्थ हैं कुछ नहीं कर सकता उसके साथ अत्याचार करना भगवान को मंजूर नहीं है। जो दूसरों का नाश करने के लिए समर्थ होते हैं, उनको गीता के अनुसार भगवान श्रीकृष्ण असुर बताते हैं। कहते है -

प्रभवन्त्यग्रकर्माणः क्षयाय जगतोहिताः।

जानबूझकर मूक, असमर्थ जीवों की हत्या करते हो और चाहते हो कि हमारा भला हो जाये, कैसे हो जायेगा? कल्याण कैसे हो जावेगा ? श्रीराम ने शत्रु का भी अहित नहीं किया -

अरिहुक अनमल कीन्हन रामा

अंगद को रावण के पास भेजा तो उससे भी कहा -

काजु हमार तासु हित कोई

जो सीता को ले गया और मरने मारने को तैयार है, उसके पास भी दूत को इसलिए भेजते हैं कि काम तो हमारा बन जाये, हमें हमारी सीता मिल जाये परन्तु रावण का हित हो जाये। यह बात किस संस्कृति में है, उस संस्कृति में जन्म लेना बंद कर देना कितना भारी अन्याय है। शास्त्र जिसको महापाप कहता है और जिसको आप जानते हो उसे बड़े जोरों से कह रहे हो और फिर चाहते हो कि हमारी सद्गति हो जाये, तो सोचो कैसे हो सकती है ? मेरे देश में दुर्गा, सीता, संतोषी आदि देवियों की पूजा तो नित्य प्रति माँ बहिन करती है तथा करोड़ों लोग करते हैं परन्तु यही मां बहिन अपने पेट के अंदर पलने वाली दुर्गा सीता को निर्मम तरीकों से हत्या कर देती है। विचार करो मां का स्थान बहुत ऊंचा है। किसी कवि ने बहुत ही सुन्दर लिखा है -

ऊपर जिसका अंत नहीं, उसे आसमाँ कहते हैं।
जहां में जिसका अंत नहीं उसे मां कहते हैं॥

बार-बार विचार करो, सोचो और अपने विचारों को दृढ़ करो कि हम कभी अपने पेट में पलने वाली कन्या को भ्रूण हत्या के रुप में कत्ल नहीं करेंगे, माँ बनने वाली दुर्गा, सीता, संतोषी को कूढ़ेदान में नहीं फेंकेगे और अपने जीवन को ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त करेंगे। किसी कवि ने बड़ा सुंदर लिखा है -

पहले तो माँ ने तुझको नौ महीने पेट में ढोया।
सीने का दूध पिलाया तू जब-जब बन्दे रोया॥
बड़ा कर्ज है तुझ पर मां का, तेरा काम है कर्ज चुकाना।
जिसने तुझे जन्म दिया रे, दिल उसका नहीं दुःखाना॥

पता : ५२, ताराधाम कालोनी, पुष्पाजंलि
द्वारिका के पास टाउनशिप, मथुरा-२८१००६

मदोन्मत्त की आत्महानि

दानार्थिनो मधुकरा यदि कर्णतालैर्दूरीकृता करिवरेण मदान्धबुद्ध्या।
तस्यैव गण्डयुगमण्डनहानिरेषा, भृङ्गाः पुनर्विकचपद्मवने चरन्ति॥

भावार्थ :- मद पर मंडराते वो याचक भ्रमरों को मदान्ध बुद्धि से यदि हाथी कान फड़फड़ाकर उड़ा डालता है तो इसमें भला भ्रमरों की क्या हानि हो गई ? उन्हें किस बात का खेद ? अरे .... वे तो उसी मदान्ध बुद्धि की शोभा को द्विगुणित कर रहे थे। जिसमें मद होगा वही तो सांसारिकों की दृष्टि में श्रेष्ठ हस्ती माना जावेगा ? मद ही तो हाथी का वैभव है ? और उसकी पहचान क्या है? जहां मद होगा वहीं तो भ्रमर झूमेंगे ? क्या गीदड़ पर वे चिपटेंगे भला ? पर .... हाय रे हाय भ्रष्ट बुद्धिधारी, मदोन्मत्त हाथी तेरे कुण्ठित भाग्य पर तरस आता है। अरे वे भँवरे तो तेरे ही गण्डस्थल का सौन्दर्य बढ़ा रहे थे। तेरे उड़ा डालने पर तेरे ही मस्तक का सौन्दर्य नष्ट हुआ। वे भँवरे तो तेरे माथे पर से उड़कर पुनः खिलेहुए कमलों के बाग में घूमने लग गए। यहाँ न बैठे और कहीं सही। उनके लिये भला क्या स्थान का अभाव था ? वे तो तेरा ही उपकार कर रहे थे। हे हतभाग्य ! तूने स्वयं अपना गौरव नष्ट कर लिया।

सांसारिक स्वार्थान्ध व्यक्तियों के प्रति बड़ा मार्मिक व्यङ्ग है ? स्वार्थ में मनुष्य इतने अन्धे हो जाते हैं कि वे अपने हितैषी प्रिय की तनिक भी मूल्याङ्कन नहीं कर पाते, तथा झिड़क डालते हैं। परन्तु इससे क्या हुआ, जो वास्तव में योग्य है, गुणी है, उनके लिये संसार में सर्वत्र ही एक से एक बढ़कर स्थान है, वह तो कहीं भी जाकर अपना सम्मान प्राप्त कर लेंगे। ऐ मानव तू जरा सोच तो सही।

- सुभाषित सौरभ

"सृष्टि उत्पत्ति विषयक वैदिक सिद्धान्त और महर्षि दयानन्द"

- मनमोहन कुमार आर्य

सृष्टि की उत्पत्ति के विषय में महाभारत काल के बाद उत्पन्न मत–मतान्तरों के साहित्य में अनेक प्रकार की अवैज्ञानिक व अविश्वनीय विचार पायें जाते हैं। महर्षि दयानन्द इन सबमें अपवाद हैं। उनके जीवन में शिवरात्रि को घटी चूहे की घटना बताती है कि उन्होनें किशोरावस्था में ही जीवन की सभी बातों को तर्क व युक्ति के आधार पर सिद्ध होने पर ही स्वीकार करने का मन बना लिया था। यही कारण था कि वह ईश्वर, जीव, प्रकृति व सृष्टि विषयक सत्य ज्ञान की खोज में अनेक वर्षों तक अध्ययन व अनुसंधान आदि करते रहे। उन्होंने सृष्टि की उत्पत्ति विषयक अपने विचार मुख्यतः सत्यार्थप्रकाश के आठवें समुल्लास में व्यक्त किये हैं जिनका आधार वेद, दर्शन व उपनिषद आदि ग्रन्थ हैं। हमने भी महर्षि दयानन्द के इस विषय के विचारों का अनेक बार पाठ व मनन किया है और हमारा विश्वास हैं कि आने वाले समय में विज्ञान इन विचारों को पूर्णतः स्वीकार कर लेगा जिसका कारण वेदों का ईश्वर प्रदत्त होने से निर्भ्रान्त होना व वैदिक साहित्य अल्पज्ञ वैज्ञानिकों से भी कहीं अधिक उच्च ज्ञान व विज्ञान के उच्च कोटि के चिन्तक मनीषी ऋषियों की देन है।

सत्यार्थप्रकाश में ऋग्वेद 12/129/7 मन्त्र के आधार पर महर्षि दयानन्द कहते है कि यह विविध सृष्टि इस जगत के स्वामी ईश्वर से प्रकाशित हुई है। वह इस जगत् का धारण व प्रलयकर्त्ता है। इस सृष्टि को बनाने वाला ईश्वर इस जगत में व्यापक है। उसी से यह सब जगत उत्पत्ति, स्थिति व प्रलय को प्राप्त होता है। मनुष्य अर्थात् आत्मा को उस परमात्मा को जानना चाहिये और उसके स्थान पर किसी अन्य को सृष्टिकर्त्ता नहीं मानना चाहिये। ऋग्वेद के मन्त्र 10/29/3 में बताया गया है कि जगत की रचना से पूर्व सब जगत् अन्धकार से आवृत, रात्रिरूप में जानने के अयोग्य, आकाशरूप तथा तुच्छ अर्थात् अनन्त परमेश्वर के सम्मुख एकदेशी आच्छादित था। पश्चात् परमेश्वर ने अपने सामर्थ्य से इस कारणरूप जगत् को कार्यरूप कर दिया अर्थात् बना दिया। ऋग्वेद के मन्त्र 10/129/1 में कहा गया है कि सब सूर्यादि तेजस्वी पदार्थों का आधार और जो यह जगत् हुआ है और होगा उस का एक अद्वितीय पति परमात्मा इस जगत् की उत्पत्ति के पूर्व विद्यमान था और जिस ने पृथिवी से लेके सूर्यपर्यन्त जगत् को उत्पन्न किया है, हे मनुष्य ! उस परमात्म देव की प्रेम से भक्ति किया करें। यजुर्वेद के मन्त्र 31/2 में ईश्वर ने बताया है कि जो ईश्वर सब सृष्टिगत पदार्थों में पूर्ण पुरुष है, जो नाशरहित कारण जड़ प्रकृति और जीव का स्वामी है तथा जो पृथिव्यादि जड़ और जीव से अतिरिक्त है, हे मनुष्य! वही पुरुष इस सब भूत, भविष्यत् और वर्तमानस्थ जगत् का बनाने वाला है, ऐसा सब मनुष्यों को जानना चाहिये। तैत्तिरीयोपनिषद् में कहा गया है कि जिस परमात्मा द्वारा रचना करने से ये सब पृथिव्यादि भूत व पदार्थ उत्पन्न होते हैं, जिस से जीते और जिससे व जिसमें प्रलय को प्राप्त होते हैं, वह ब्रह्म है। उस को जानने की इच्छा सभी मनुष्यों को करनी चाहिये। शारीरिक सूत्रों में कहा गया है कि इस जगत् का जन्म, स्थिति और प्रलय जिस से होता है, वह ब्रह्म है और वह जानने के योग्य है।

प्राचीन वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार यह समस्त जगत् इसको बनाने वाले निमित्त कारण परमेश्वर से उत्पन्न हुआ है। परमेश्वर ने इस जगत् को उपादान कारण अर्थात् सत्व, रज व तम गुणों वाली सूक्ष्म व मूल प्रकृति से बनाया है। इस मूल प्रकृति को ईश्वर ने उत्पन्न नहीं किया। यह भी जानने योग्य है कि संसार में ईश्वर, जीव व प्रकृति, यह तीन पदार्थ अनादि व नित्य हैं। इन जीव और ब्रह्म में से एक जो जीव है वह इस संसार में पाप पुण्य रूप फलों को अच्छे प्रकार भोक्ता है और दूसरा परमात्मा कर्मों के फलों को न भोक्ता हुआ चारों ओर अर्थात् भीतर व बाहर सर्वत्र प्रकाशमान हो रहा है। जीव से ईश्वर, ईश्वर से जीव और दोनों से प्रकृति भिन्न स्वरूप व तीनों अनादि हैं। उपनिषद् में बताया गया है कि प्रकृति, जीव और परमात्मा तीनों अज अर्थात् जिनका जन्म कभी नही होता और न कभी यह तीन पदार्थ जन्म लेते हैं अर्थात् ये तीन पदार्थ सब जगत् के कारण हैं। इन का कारण कोई नहीं। इस अनादि प्रकृति का भोग अनादि जीव करता हुआ शुभ व अशुभ कर्म

के बन्धनों में फंसता है और उस में परमात्मा नहीं फंसता क्योंकि वह प्रकृति व उसके पदार्थों का भोग नहीं करता।

प्रकृति क्या है, इसका वर्णन सांख्य दर्शन में है। इसके अनुसार प्रकर्षति (सत्व) शुद्ध (रजः) मध्य (तमः) जाड्य अर्थात् जडता गुणों से युक्त है। यह तीन गुण मिलकर इनका जो संघात है उस का नाम प्रकृति है अर्थात् सत्व, रज व तम गुणों का संघात प्रकृति के सूक्ष्मतम कण की एक इकाई के समान है। सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर इस प्रकृति के सूक्ष्म सत्व, रज व तम कणों में अपनी मनस शक्ति से विकार व विक्षोभ उत्पन्न कर इनसे महतत्व बुद्धि, उससे अर्थात् उस महत्व बुद्धि से अहंकार, उस से पांच तन्मात्रा सूक्ष्म भूत और दश इन्द्रियां तथा ग्यारहवां मन, पांच तन्मात्राओं से पृथिव्यादि पांच भूत ये चौबीस पदार्थ बनते हैं। पच्चीसवां पुरुष अर्थात् जीव और परमेश्वर हैं। इनमें से सत्व, रज व तम गुणों वाली प्रकृति अधिकारिणी और महतत्व बुद्धि, अहंकार तथा पांच सूक्ष्म भूत प्रकृति का कार्य हैं। यही पदार्थ इन्द्रियों, मन तथा स्थूल भूतों के कारण हैं। पुरुष अर्थात् जीवात्मा न किसी की प्रकृति, न किसी का उपादान कारण और न किसी का कार्य है। एक उपनिषद वचन में कहा गया है कि हे श्वेतकेतो! यह जगत् सृष्टि के पूर्व सत्, असत्, आत्मा और ब्रह्मरूप था। वही परमात्मा अपनी इच्छा से प्रकृति व जीवों के द्वारा बहुरूप वा जगतरूप हो गया।

जगत् की उत्पत्ति के तीन कारण क्रमशः निमित्त, उपादान तथा साधारण, यह तीन कारण होते हैं। निमित्त कारण उसको कहते हैं कि जिसके बनाने से कुछ बने, न बनाने से न बने, आप स्वयं बने नहीं और दूसरे को प्रकारान्तर बना देवे। दूसरा उपादान कारण उस को कहते हैं जिस के बिना कुछ न बने, वही अवस्थान्तर रूप होकर बने व बिगड़े भी। तीसरा साधारण कारण उस को कहते हैं कि जो बनाने में साधन और साधारण निमित्त हो। निमित्त कारण दो प्रकार के होते हैं। एक–सब को कारण से बनाने, धारण करने और प्रलय करने तथा सब की व्यवस्था रखने वाला मुख्य निमित्त कारण परमात्मा। दूसरा–परमेश्वर की सृष्टि में से पदार्थों को लेकर अनेकविध कार्यान्तर बनाने वाला साधारण निमित्त कारण जीव। सृष्टि का उपादान कारण प्रकृति को कहते हैं। प्रकृति वा परमाणुरूप प्रकृति जिस को सब संसार के बनाने की सामग्री कहते हैं। वह जड़ होने से अपने आप न बन और न बिगड़ सकती है किन्तु दूसरे के बनाने से बनती और बिगाड़ने से बिगड़ती है। कहीं–कही जड़ के निमित्त से जड़ भी बन और बिगड़ भी जाता है। जैसे परमेश्वर के रचित बीज पृथिवी से गिरने और जल पाने से वृक्षाकार हो जाते हैं और अग्नि आदि जड़ के संयोग से बिगड़ भी जाते हैं। परन्तु इनका नियमपूर्वक बनना और वा बिगड़ना परमेश्वर और जीव के आधीन है।

जब कोई वस्तु बनाई जाती है तब जिन–जिन साधनों का प्रयोग करते हैं वह ज्ञान, दर्शन, बल, हाथ और नाना प्रकार के साधन कहलाते हैं और दिशा, काल और आकाश साधारण कारण होते हैं। जैसे घड़े का बनाने वाला कुम्हार निमित्त कारण, मिट्टी उपादान कारण और दण्ड चक आदि सामान्य कारण। दिशा, काल, आकाश, प्रकाश, आंख, हाथ, ज्ञान, क्रिया आदि साधारण और निमित्त कारण भी होते हैं। इन तीन कारणों के बिना कोई भी वस्तु नहीं बन सकती और न बिगड़ सकती है।

इस प्रकार से यह समस्त जगत् जिसमें सूर्य, चन्द्र, तारें, पृथवी व पृथिवी के सभी पदार्थ तथा प्राणी जगत सम्मिलित है निमित्त कारण ईश्वर द्वारा उपादान कारण परमाणु रूप प्रकृति से बनाये गये हैं। परमात्मा के सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, अनादि, नित्य आदि गुणों से युक्त होने से उसके द्वारा सृष्टि बनाने व उसे संचालित करने में असम्भव जैसा कुछ भी नहीं है। यह वर्णन पूर्णतः सत्य, वैज्ञानिक, तर्क संगत, विश्वसनीय, निर्भ्रान्त व वेदों के प्रमाणों से पुष्ट है। अतः इस सिद्धान्त को सभी आध्यात्मवादियों व भौतिक विज्ञान के वैज्ञानिकों को मानना चाहिये। इसके विपरीत वैज्ञानिकों के पास अभी तक सृष्टि उत्पत्ति का कोई सन्तोषजनक उत्तर इसलिए नहीं है कि यह सृष्टि अनादि निमित्त कारण ईश्वर द्वारा अनादि उपादान कारण प्रकृति से निर्मित की गई है जिसका उद्देश्य अनादि जीवात्माओं को उनके पूर्वजन्मों के कर्मों का सुख व दुःखरूपी फल प्रदान करना है। सृष्टि रचना विषयक इस ज्ञान के विस्तार व संशयों के निवारण के लिए महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थप्रकाश का आठवां समुल्लास व ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के सृष्टि की रचना व उत्पत्ति के प्रकरणों को देखना चाहिये।

वेद, उपनिषदों व दर्शनों का अध्ययन भी इस विषय की सभी शंकाओं को दूर करता है। योग का अभ्यास, ध्यान व समाधि से भी ईश्वर द्वारा सृष्टि रचना का यह गुप्त व सूक्ष्म विषय जाना जा सकता है। हम आशा करते हैं कि पाठक इस लेख से लाभान्वित होंगे। इसी के साथ लेखनी को विराम देते हैं।

पताः 196 चुक्खूवाला–2 देहरादून–248001

वैचारिक

सच्चे मानव की तलाश

- डॉ. कन्हैयालाल आर्य

सिकन्दर जब भारत आया और एक फकीर से मिलने गया। सिकन्दर अपनी अकड़ में था। जीतता चला जा रहा था। कभी पराजित नहीं हुआ था। अब तक उसने कोई पराजय नहीं देखी और जानी थी। नैपोलियन को पराजय का मुख देखना पड़ा था। संभवतः संसार में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं हुआ जिसने कभी हार न देखी हो, परन्तु सिकन्दर अकेला ऐसा व्यक्ति था जिसे पराजय का मुंह नहीं देखा था। तभी तो उसको महान सिकन्दर कहा जाता है परन्तु उस फकीर ने सिकन्दर को ऐसे देखा नीचे से ऊपर तक जैसे कोई पुलिस वाला किसी चोर को देखता है। सिकन्दर थोड़ा तिलमिलाया। सिकन्दर ने फकीर से कहा- "ऐसे कैसे देखते हो ? मैं हूं महान सिकन्दर।"

फकीर ने कहा - "चुप! नामसझ। किस बात से तू महान है ?" सिकन्दर ने कहा कि किस बात से। सारी दुनियां पर मैंने विजय प्राप्त कर ली है। फकीर ने कहा- "एक बात सुन। मान लिया कि तू मरुस्थल में कही खो जाये, रास्ता भटक जाये, प्यास तुझे लगे और अपने यह लोटा, जिसमें पानी हो, तुम्हारे समक्ष उपस्थित हो जाय और तू गिड़गिड़ाये कि मुझे पानी दे दो और मैं कहूं कि क्या देगा पानी के बदले में! बोल! कितना दे सकता है कि लोटे के पानी के बदले में ?"

सिकन्दर ने उत्तर दिया- "यदि ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो जाये कि मरुस्थल में मैं बिना पानी के मर रहा होऊंगा, प्यास से तड़प रहा होऊंगा तो मैं उस प्यास की तीव्रता को शान्त करने के लिए आधा राज्य दे दूंगा", फकीर ने कहा, "यदि आधे राज्य में मैं इस पानी के लोटे को न बेचना चाहूं तो तुम क्या करोगे ?" राजा ने झट उत्तर दिया कि "अत्यधिक विपरीत परिस्थिति हो जाने पर मैं अपना पूर्णराज्य भी दे दूंगा" उस फकीर ने कहा - "तो बस तेरी महानता का मूल्य हमें पता चल गया है। तेरे पूर्ण राज्य की कीमत मेरे एक पानी से भरे लोटे के बराबर है। एक पानी से भरे लोटे में मैं तेरे पूरे राज्य को खरीद सकता हूं परन्तु राजन! सुनो जब मृत्यु द्वार पर दस्तक देगी तब यदि तू पूरा राज्य भी दे देगा तो भी इस पूरे राज्य के बदले एक कण भी नहीं पा सकेगा" और हुआ भी यही। इतिहास इस बात का साक्षी है कि "सिकन्दर जब भारत से वापिस अपने नगर की ओर लौट गया था, मृत्यु ने अपने संकेत देने प्रारम्भ कर दिये। मृत्यु का समय इतना निकट आ चुका था कि वह अपने नगर तक पहुंच नहीं सकता था। मृत्यु के समय वह स्थान उसके नगर से इतना दूर था कि कम से कम २४ घण्टे की यात्रा के पश्चात ही पहुंच सकता था परन्तु वह अपनी माँ के साथ प्रतिज्ञा करके आया था चाहे कुछ भी हो जाये, परन्तु वह अपनी माँ के पास अवश्य आयेगा और अपनी माँ के सम्मुख संसार की जीती हुई पूर्णरुपेण सम्पत्ति उसके चरणों में रख देगा। उसने मन्त्रियों एवं वैद्यों से उसने कहा कि जो भी चाहे ले लो परन्तु किसी प्रकार मुझे २४ घण्टे के लिए जीवित रख लो ताकि मैं माँ से की हुई प्रतिज्ञा पूरी कर सकूं।" वैद्यो ने कहा, "राजन ! यह असम्भव है। अब कुछ भी नहीं हो सकता। अब कोई उपाय नहीं। हमारी कोई भी औषधि आपको २४ घण्टे भी नहीं बचा सकती।" सिकन्दर हंसने लगा। वैद्यों ने पूछा - हंसते क्यों हो ? सिकन्दर ने कहा - कुछ समय पूर्व एक फकीर से मैं मिला था। उसकी वह बात "जब तेरी मृत्यु आयेगी तो यह पूर्ण राज्य के देने पर भी तुझे एक क्षण भी नहीं मिलेगा। मैंने उस फकीर की बात को अनसुना कर दिया, परन्तु आज उसकी बात सत्य सिद्ध हो रही है कि मैं अपने पूर्ण राज्य देकर भी चौबीस घण्टे के जीवन को क्रय नहीं कर सकता हूँ। यह जीवन पानी में गया। मैं तो केवल पानी पर ही रेखायें खींचता रहा। आज मुझे ज्ञात हो गया है कि मृत्यु राजा और फकीर किसी में भेद नहीं करती।"

यह दृष्टान्त से यह शिक्षा मिलती है कि संसार छोड़ो या न छोड़ो अकड़ छूटनी चाहिये। कुछ लोग हैं, जो धन के कारण अकड़े हैं कि इतना हमारे पास धन है और

कुछ इसलिए अकड़े है कि हमने इतना धन छोड़ा है परन्तु दोनों का कारण धन है। कुछ लोग धन की अकड़ में हैं तो कुछ लोग ज्ञान की अकड़ में हैं। कोई कहता है कि मुझे वेद मौखिक कण्ठस्थ है, कोई गीता और कोई बाईबिल कण्ठस्थ करने की बात पर अकड़ में हैं। वे तो तोते हैं केवल। तोतों से अधिक उनका कोई मूल्य नहीं। ये कण्ठस्थ करने का काम तो अब मशीनों ने कर लिया इसमें अकड़ने जैसा कुछ भी नहीं। तुम्हारा ज्ञान भी तुम्हारी मूढ़ता को भरने का कारण हो जायेगा। मानव का जन्म प्रातःकाल की तरह है। कितनी शताब्दियाँ व्यतीत हो गई। कितने-कितने जन्मों के पश्चात्, कितनी योनियों में भटकने के पश्चात कितनी यात्राओं के पश्चात यह दुर्लभ मानव चोला तुम्हें प्राप्त हुआ है, उसे क्या धन और ज्ञान की अकड़ में व्यतीत कर दोगे? और तुम अब भी सोये हुए हो, कब जागोगे ? मनुष्य का जन्म तो तुमने पा लिया परन्तु अभी मनन नहीं उत्पन्न हुआ इसलिए तुम नाम मात्र के मनुष्य हो। मनन तो तब होगा जब तुम मन के पार जाओगे। मन के भीतर जो दिया है, उसकी खोज करो। मनातीत जो है, उसके अनुभव से ही तुम वस्तुतः मानवीय होते हो, नहीं तो नाम-मात्र के मनुष्य हो तुम। इस संबंध में एक दृष्टान्त प्रस्तुत है -

एक यूनानी फकीर था जिसकानाम डायोजनीज था। वह जीवन भर नंगे-धंड़गा घूमता हुआ जीवन भर जलती हुए एक लालटेन लेकर घूमता रहा। जलती हुई लालटेन वह भी दिन में। लोग उसे देखकर बड़े आश्चर्यचकित रहते और पूछते, "दिन में लालटेन क्यों लिये फिरते हो"। डायोजनीज उत्तर देता है, "मैं मानव की तलाश कर रहा हूँ" लोगों ने पूछा - "क्या बात है तुम्हें कोई भी मानव आज तक नहीं मिला ?" डायोजनीज कहता है, "मनुष्य का चोला पहने तो बहुत से पशु घूम रहे हैं परन्तु मुझे मानव कोई नहीं मिला।" उसकी खोज में मैने पूरा जीवन लगा दिया है।

जब डायोजनीज मृत्यु के द्वार पर पहुंच चुका था। लालटेन जलती हुई उसके बगल में रखी थी। किसी ने पूछा - "डायोजनीज। अब तो तुम मृत्यु के द्वार तक पहुंच चुके हो, कोई मानव मिला कि नहीं ?" डायोजनीज ने उत्तर दिया - "मानव तो नहीं मिला परन्तु परमात्मा का धन्यवाद है किमेरी लालटेन किसी ने नहीं चुराई, यही क्या कम है ? अब तो इसी धन्यवाद के साथ मृत्यु का आलिंगन कर रहा हूं कि बहुत कृपा की उन लोगों ने इस लालटेन को नहीं चुराया। हम तो केवल देखने मात्र के मानव हैं। किसी व्यक्ति से पूछते हैं कि "भैया ! क्या अपना जीवन इस प्रकार व्यतीत करोगे या कुछ साधना भी करोगे।" तो उत्तर देते है कि हाँ कल से प्रारम्भ करेंगे। परन्तु सोचो। कल भी आता है ? कल भी आया है ? सोचते रहते हैं - कल करेंगे ध्यान, आज तो आकाश नहीं है। कल कल करते जीवन व्यतीत हो जाता है परन्तु हमारा कल नहीं आता।

मैं कई बार सोचता हूँ कि ३३ करोड़ देवी देवताओं को लोग मानते आये हैं अब तो इस राष्ट्र की जनसंख्या १३३ करोड़ हो गई है। अब तो कोई देवता दिखाई नहीं देता। अब तो शैतान और शैतानों के शिष्य ही दृष्टिगोचर होते हैं। हमने इस धरा को नरकमय बना दिया है। लोग सत्यनारायण की कथा करवाते रहते हैं - मुझे क्षमा करेंगे आप। उसमें न तो कोई सत्य है और न ही नारायण। सत्यनारायण की कथा। नाम पर सत्यनारायण की कथा है। बस लोग करवाते रहते हैं, पढ़ने वाले पढ़ते रहते हैं, सुनने वाले सुनते रहते हैं। न पढ़ने वालों के जीवन में कोई सत्य आता है और न ही सुनने वालों के जीवन में। न पढ़ने वालों का कोई अर्थ है और न ही सुनने वालों का। कैसी कैसी झूठी बातें लोगों ने गढ़ रखी है। जैसे -

अजामिल नाम का पापी मर रहा था और उसने बेटे नारायण को बुलाया। पुराने युग में सभी नाम परमात्मा के होते थे। समय ने करवट बदली अब इस तरह के नाम रखना दकियानूसी लगता है। तो अजामिल के बेटे का नाम नारायण था। अजामिल था महापापी। उसने अपने बेटे को बुलाया परन्तु कथा यहां कहती हैं कि नारायण धोखे में आ गये। नारायण ने सोचा कि अजामिल मेरे नाम का स्मरण कर रहा है जबकि वास्तविकता यह थी कि वह बेटे को बुला रहा था। कथानुसार अजामिल की मृत्यु हुई, सीधे स्वर्ग पहुंचे क्योंकि मरते समय नारायण का नाम जो लिया था। जहां तक संभावना इस बात की है कि अजामिल

ने अपने बेटे को इसलिए बुलाया होगा कि वह अपने जन्म भर के किये हुये पापों, डकैतियों, लूटों से जो धन जहां-जहां गाड़ा हुआ था उसका पता अपने बेटे को बताये या किस प्रकार इस सभी कुकर्मों को करने की विधि बताना चाहता होगा, परन्तु अपने मुख से अजामिल ने नारायण का नाम क्या लिया कि ऊपर बैठा परमात्मा धोखे में आ गया। ये पाखण्डी लोग इन कथाओं के माध्यम से किस-किस प्रकार की कहानियां गढ़ लेते हैं और वे कहते हैं कि एक बार नारायण शब्द मुख से उच्चारित कर दियातो जन्म-जन्म के पापों से मुक्ति मिल जायेगी और स्वर्ग की प्राप्ति भी हो जायेगी। समाज में इस प्रकार की कथाओं ने साधारण जनों में पाप, भ्रष्टाचार, दुराचार की भावनाओं को जन्म दिया है। वे पाखण्डी लोग इस प्रकार प्रचार करते हैं कि प्रभु पतित पावन है पतितों को क्षमा कर देगा, वह महाकरुणावान है अपने करुणा की अमृत वर्षा एक बार उसका नाम लेने से ही कर देगा। परन्तु वे इस वैदिक सिद्धान्त को भूल जाते हैं - **"अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्"** किये हुये कर्मों का फल अवश्य भुगतना पड़ेगा। कोई और इस बात के फल का भागी नहीं बन सकता। इसलिए तो डायोजनीज दिन में भी लालटेन जलाकर मानव की खोज में लगा था। तभी तो वेद का ऋषि लिखता है -

"मनुर्भव" मनुष्य बन। ऋषि दयानन्द जी ने मानव उसे बताया है जो मननशील हों। प्रत्येक कार्य को विचार कर करें। पढ़े हुए और सुने हुए वैदिक सिद्धान्तों को आचरण में लायें। जिस दिन ऐसा सम्भव होगा हम सब को सच्चे मानव की तलाश पूर्ण हो जायेगी।

वार्षिक वृत्तांत, दशांश एवं अग्निदूत पत्रिका का शुल्क भेजने बाबत्

-: आवश्यक सूचना :-

श्रीमान् प्रधान/मंत्री,

समस्त संबद्ध आर्यसमाज, छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा

श्रीमन्नमस्ते,

अवगत हो कि प्रत्येक वित्तीय वर्ष समाप्ति के पश्चात् अप्रैल माह में उपरोक्त विषयांकित वार्षिक वृत्तांत, दशांश एवं सभा मुख पत्र अग्निदूत का शुल्क सभा को नियमावली अनुसार प्रस्तुत कर देना चाहिए, परन्तु कुछ आर्यसमाजों को छोड़कर अधिकांश आर्यसमाजें उपरोक्त वांछित वार्षिक वृत्तांत एवं दशांश सभा कार्यालय को आज तक नहीं भेजे हैं।

पुनश्च विदित हो कि आर्यसमाज के नियम-उपनियम अनुसार आर्यसमाजों का प्रतिवर्ष निर्वाचन किया जाकर उसका उल्लेख वार्षिक वृत्तांत में दर्ज कर सभा को भेजा जाना चाहिए, परन्तु कुछ आर्यसमाजों को छोड़कर अधिकांश आर्यसमाजों द्वारा उपरोक्त वांछित वार्षिक वृत्तांत सभा कार्यालय को आज तक नहीं भेजा गया है।

विदित हो कि इस वर्ष 2018 में सभा का त्रैवार्षिक वृहद अधिवेशन एवं निर्वाचन सम्पन्न होने जा रहा है। अतः लंबित वांछित वार्षिक वृत्तांत, दशांश एवं अग्निदूत का वार्षिक शुल्क 100 रुपया सभा कार्यालय को इस पत्र प्राप्ति के तत्काल बाद सभा कार्यालय को अनिवार्य रुप से भेजने का कष्ट करें।

मंत्री

छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा

सांस्कृतिक

आपसी वैमनस्य, कारण व निवारण

- डॉ. बिजेन्द्रपाल सिंह

हमारा देश भारत प्राचीनकाल में सोने की चिड़िया कहा जाता था, अत्यन्त गौरवशाली व समृद्ध था, ज्ञान-विज्ञान में विश्व गुरु था। यह इतना गौरवशाली बनने का कारण हमारे पूर्वजों का वेद मार्ग पर चलना ही था। वेद का वह सत्यतः आचरण करते थे। तब कहीं ताले नहीं लगते थे। चोरी चारी अपराध असत्य अन्याय का तो नाम ही न था। जो मन में होता था वही वाणी में होता था। भूल से कोई कृत्य हो भी जाता था तो परमात्मा को सर्वव्यापक मान स्वयं पश्चाताप कर लेते थे।

आज जो चारों ओर अपराध चोरी, डाका, राहजनी, भ्रष्टाचार, झूठ, अन्याय का बोलबाला है उसका कारण ही वेद को भूल जाना है। जब से वेदानुसार वर्ण व आश्रम व्यवस्था समाप्त हो गयी वेद प्रचार का प्रवाह रुक गया। वेद विरुद्ध मत व अन्धविश्वास पाखण्ड पनपने लगे।

एक आर्य जाति अथवा श्रेष्ठ समाज था, पश्चात् अनेक जातियों, उपजातियों मत मतान्तर सम्प्रदायों में बंट गया तभी से परस्पर ऊँच-नीच, अपने-पराये आदि का भेदभाव बढ़ गया, ईर्ष्या वैमनस्य बढ़ गए।

ईश्वर ने मनुष्य की एक जाति बनाई, हिरण, चींटी की जाति बनाई। मनुष्य ने अपने को जातियाँ, सम्प्रदायों में बांट लिया। जन्तुओं में विभिन्न जातियां एवं वृक्षों में आम, पीपल, वट, नीम, लताओं में गिलोय, अमृता आदि जातियां हैं। मनुष्यों में गुण कर्म स्वभाव भेद हैं। वह भी ईश्वर कृत और ईश्वर के ज्ञानानुसार वैदिक वर्ण व्यवस्था है, अर्थात् अन्तयज जाति भेद हैं, ब्राह्मण का कर्त्तव्य वेद का पढ़ना-पढ़ाना है अथवा जो वेद पढ़े व पढ़ावे संस्कार व शिक्षा का ज्ञान देवे वह ब्राह्मण है। गुरुकुलों में सहस्रों विद्यार्थी पढ़ते थे। साधु-संन्यासी, ऋषि-महर्षि-आचार्य-गुरुजन वहां वेद ज्ञान का शिक्षा प्रदान करते थे, वही थे ब्राह्मण। प्राचीनकाल में महात्मा विदुर व चाणक्य जैसे महान विद्वान थे। महर्षि वशिष्ठ, याज्ञवल्क्य, महात्मा भर्त्तहरि ब्राह्मण थे। ऐसे ही गुरुकुल आश्रम में अथवा ऋषि महर्षियों के सान्निध्य से धनुर्वेद पढ़ कर शत्रु से प्रजा की व अपनी रक्षा करना क्षत्रिय का कर्त्तव्य था।

मनुस्मृति के अनुसार ब्राह्मण का कर्त्तव्य पढ़ना-पढ़ाना,यज्ञ करना-कराना, दान देना-लेना यह दृढ़ कर्त्तव्य है। न्याय से प्रजा की रक्षा, दान, अध्ययन (वेदादि शास्त्रों का पढ़ना-पढ़ाना) जितेन्द्रिय रहना क्षत्रिय के कर्त्तव्य है। पशुपालन, कृषि, व्यापार, दान यह वैश्य के कर्त्तव्य अथवा गुण धर्म होते हैं। क्षत्रिय ब्राह्मण वैश्य की सेवा करना, शूद्र का कर्त्तव्य है शूद्र को निन्दा, ईर्ष्या, अभिमान आदि दोषों को छोड़कर अपने कर्त्तव्यों का पालन करना योग्य है। वेदों को न जानकर जातिवाद, ऊँच-नीच के पचड़े में पड़कर आदमी आज (पाप) अनर्थ कर रहा है।

यह जो वर्ण व्यवस्था का निर्धारण है, गुण-कर्म-स्वभाव से है, यह वेदानुसार ही है। ऐसे ही ब्रह्मचर्य आश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम व्यवस्था वैदिक है, ईश्वरकृत है। ब्रह्मणादि चारों वर्णों की व्यवस्था का निर्धारण परीक्षापूर्वक करना राजा व विद्वानों द्वारा होता है। यह सब जन्मकृत नहीं है। अर्थात् वेदानुसार जन्म से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र नहीं होते। मनुष्य ने इनको अर्थात् ब्राह्मण आदि वर्णों को जाति, अर्थात् ब्राह्मणी के गर्भ से जो सन्तान होगी वही ब्राह्मण होगी। क्षत्रणी के गर्भ से जो हो वही क्षत्रिय ऐसी व्यवस्था अवैदिक है। जन्मना जाति व्यवस्था मनुष्य कृत है। भोजन भेद से ईश्वरकृत मनुष्य कृत भी है, मांसाहारी व शाकाहारी जैसे सिंह, व्याघ्र मांसाहारी है यह मांस ही खाते हैं, घास नहीं खाते हैं। गाय, घोड़ा, बकरी आदि घास खाते हैं, मांस नहीं। मनुष्य को भी शाकाहारी ही बनाया है परन्तु मनुष्य मांस खाये तो वह मनुष्यकृत है।

ईश्वर ने मनुष्य को बनाया है परन्तु मनुष्य न मनुष्य को जातियों व उपजातियों एवं सम्प्रदाय आदि में बांट दिया। किसी कवि ने लिखा है -

मर रही है इन्सानियत दुनिया लगी है सोने में।
गुजर रही है जिन्दगी, यूं ही रोने-धोने में॥
तू भी किसी को मानता होगा, ऐसा न नादान बन।
हिन्दू बन या मुसलमान बन, पहले तू इन्सान बन॥
सिसकरही है माँएं बैठकर, कहीं अंधेरे कोने में।
फ़ुरसत हो तो पूछना क्या दर्द है, किसी को खोने में॥
मानव आज पशुओं पक्षियों को मार कर खा रहा है।
मानव मानव का रक्त बहा रहा है, दरिंदगी कर रहा है॥
तू भी किसा का बेटा होगा ऐसा ना हैवान बन।
हिन्दू बन या मुसलमान बन, पहले तू इन्सान बन॥

ईश्वर ने मनुष्य को बनाया परन्तु मनुष्य सम्प्रदायों जैन, बौद्ध, मुसलमान, हिन्दू, ईसाई, यहूदी, सवर्ण,दलित, अमीर-गरीब में बंट कर एक दूसरे से ईर्ष्या, द्वेष करने लगा और परस्पर एक दूसरे से विरोध कर झगड़ा व लड़ाई करने लगा, एक दूसरे का रक्त बहाने लगा, छूआछूत का रोग लग गया। १९४७ में भारत-पाकिस्तान अलग हुए हिन्दू मुसलमान का रक्त बहने का कारण था, आपसी भेदभाव हिन्दू और मुसलमान था। पाकिस्तान से रेलगाड़ियों से आने वाले हिन्दूओं को काट-काट कर उनके शवों से छत पर लदी लाशों से भरी गाड़ी भारत आई थी। सीरियां में नरसंहार हुआ। यरुशलम करबला हेतु चल रही मारकाट यह मनुष्य के जातियों फिरकों में बंटने के कारण ही तो है। ईश्वर ने मनुष्य की एक जाति बनाई और बताया कि हे मनुष्य तू मनुष्य बन। मनुर्भव का ज्ञान दिया। फिर आपस में मनुष्य मनुष्य का ही शत्रु बन रहा है। कारण यही है कि वह जाति सम्प्रदायों में बंट गया।

रामायण, महाभारत, कालीदास, काव्यामृतम, रघुवंश नाटकम्, प्राचीन इतिहास पुस्तकों में मनुष्य को आर्य कहा गया है, क्योंकि वह वेदाचरण करने वाले आर्य ही थे और यदि कोई ईश्वर के मार्ग पर न चले अनार्यत्व के मार्ग पर चले तो उनको दण्ड दिया गया, क्योंकि मनुष्य है तो मनुष्य के धर्म का ही आचरण करना चाहिए।

आज मनुष्य को और अधिक बांटा जा रहा है राजनीतिज्ञों ने जातिवाद को अपना अस्त्र बना लिया है जब चुनाव आते हैं तो कहां कौन कितने प्रतिशत यादव, अहीर, गुर्जर, राजपूत, जाट, ब्राह्मण है और सवर्ण व दलितों का प्रतिशत कितना है हिन्दू-मुसलमान कितने हैं ऐसे समीकरण देखे जाते हैं जो कि इस देश के लिए अत्यन्त घातक है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् हिन्दू, मुस्लिम का भेद नहीं होना चाहिए था, ऐसा कानून बनता कि प्रत्येक अपने आपको आर्य बोलता, आर्य की परिभाषा बतायी जाती जो कि मनुष्य निर्माण हेतु होती। जब मनुष्य मनुष्य बनता आर्य बनता तो कहीं भेदभाव आदि न होता। जब महात्मा गांधी अफ्रीका में काले गोरे का भेद मिटा सकते थे तो भारत में जाति भेद मिटाने का बिगुल क्यों नहीं बजाया। यह कार्य महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेद प्रचार करके किया सत्यार्थ प्रकाश द्वारा आर्य बनने को कहा मनुष्य बनने को कहा। हमारी व्यवस्था वैदिक होती और वैदिक धर्म को लागू करना चाहिए था, तब शासन आगे बढ़ाते। यह कार्य शुद्धि द्वारा किया गया, जिससे अपने हिन्दू मत से बिछुड़े मुसलमान अपने मत में वापिस आ जाये और यह प्रक्रिया तब तक चलती जब तक सब एक मत न हो जाये।

वेद में कहा है - **'संगच्छध्वं संवदध्वम् सं वो मनांसि जानाताम्'** अर्थात् सबके मन, वचन, विचार एक हों, सब एक साथ चलें तभी शान्ति सम्भव है। आज भी समय है कि हम सब आर्य धर्म को अपनाएँ तभी सुख-शान्ति पूर्वक रह सकेंगे। सामाजिक, भौगोलिक, राजनैतिक रुप से मनुष्य को बांटना बन्द करना होगा, भारत में प्राचीन काल के सभी आर्य थे, तो आज भी व भविष्य में भी सभी आर्य हों यदि मानव बन जाएं तो क्या बुराई है। संविधान में ऐसा होना चाहिए, जिससे मनुष्य आर्य बनें, ऊँच-नीच, सम्प्रदाय, जाति-भेद की खाई में न बंटे। एक मन व विचार हों तभी **सर्वे भवन्तु सुखिनः** की बात सत्य सिद्ध होगी। **कृण्वन्तो विश्वमार्यम्** हमारा उद्देश्य सफल होगा, ऐसी ईश्वर से प्रार्थना है।

पता : चन्द्रलोक कालोनी, खुर्जा

जो स्वयं भगवान की सेवा में लगा है तथा अपने आचरण से दूसरों को लगाता है, वह बड़ा भाग्यवान् है और वहीं प्राणियों की सच्ची सेवा करने वाला है।

सामयिक

विश्व पर्यावरण दिवस

डॉ. सुरेन्द्र सिंह कादियाण

५ जून हर वर्ष समूचे विश्व में पर्यावरण दिवस के रुप में मनाया जाता है। इसकी शुरुआत सन् १९७२ में हुई। भारत में वैदिक युग से ही पर्यावरण संबंधी चेतना निरन्तर विकसित होती रही है। पुराणों में ताल, तलाबों, बावड़ियों के निर्माण को पुण्य कर्म की संज्ञा दी गई है। वृक्षारोपण का बड़ा भारी फल बताया गया है और नदियों के प्रति श्रद्धा भावना विकसित कर इनके पवित्रीकरण कर बल दिया गया है।

भारत को पर्यावरण प्रदूषण से यदि बचना है तो उसे अपनी पुरानी वैदिक संस्कृति की ओर लौटना होगा और उन जीवन मूल्यों को अपनाना होगा जो वेदों ने स्थापित किये थे। इस दिशा में बढ़ते हुए हमें सर्वप्रथम अपने वृक्षों की सम्पदा को बचाना और बढ़ाना होगा, पशु, धन को संरक्षित व विकसित करने के लिए बूचड़खाने बन्द करने होंगे व शाकाहार को अपनाना होगा, अपनी नदियों व तालाबों का अस्तित्व बचाना होगा, नदी जोड़ों अभियान को राष्ट्र धर्म मान कर पूरा करना होगा, बड़े उद्योगों की बजाय लघु कुटीर उद्योगों का जाल पूरे देश में फैलाना होगा, ईंटों के भट्टों पर प्रतिबन्ध लगा कर नई तकनीक से ईंट बनाने को प्रोत्साहन देना होगा, रासायनिक उर्वरकों व रासायनिक कीट नाशकों का प्रयोग पूरी तरह वर्जित कर गोबर, कम्पोस्ट, केंचुआ खाद के विकल्प तैयार करने होंगे, पोलीथीन व प्लास्टिक वस्तुओं का निषेध करना होगा, धूम्रपान आदि पर प्रतिबन्ध लगाना होगा। मृदा, जल, वायु, आकाश से संबंधित जितने भी पर्यावरण-प्रदूषण कारक देश में मौजूद हैं उन सभी के उन्मूलन के लिए एक वृहद योजना तैयार करनी होगी जिसमें ऊपर लिखी मोटी-मोटी बातों को अनिवार्य रुप से शामिल करना होगा।

व्यक्तिगत स्तर पर हम भी पर्यावरण-प्रदूषण को कम करने में सहायक बन सकते हैं यदि हम पोलिथीन व प्लास्टिक से बनी वस्तुओं का इस्तेमाल बन्द कर दें, पानी की लीकेज को कंट्रोल करें, पानी का बेतरतीव इस्तेमाल करना छोड़ दें, पेयजल से स्कूटर, कार, मोटर साइकिल की धुलाई बन्द कर दें, वृक्षों पर कील ठोंक कर विज्ञापन पट्ठ न लगायें, पशुओं के साथ दुर्व्यवहार न करें, मांसाहार को छोड़ शाकाहार अपनायें, कार व बाइक का कम से कम इस्तेमाल करें, रेफ्रीजेटर, कूलर, ए.सी. का प्रयोग कम से कम करें, वन महोत्सव पर साल में एक वृक्ष अवश्य लगायें और उसे पानी देने की व्यवस्था करें यदि आपका किचन गार्डन है तो फल सब्जियों के पत्ते-छिलके से तैयार केंचुआ खाद का इस्तेमाल सब्जी उगाने में करें, टी.वी., रेडियो की आवाज कम रखें, घर का कूड़ा-कर्कट बाहर न फेंक कर ड्रम में इकट्ठा करें ४०वॉट के बल्ब से काम चल सकता है तो ६० व १०० वाट का बल्ब इस्तेमाल न करें। इन सब बातों के लिए आप अपने पड़ौसी, अपने मित्रों, अपने सगे-सम्बन्धियों को भी प्रेरित कर सकें तो पर्यावरण को स्वच्छ रखने में आपका भी महनीय योगदान रहेगा।

निःसन्देह भारत सरकार का पर्यावरण एवं वन मंत्रालय पर्यावरण जागरुकता बढ़ाने के लिए हर वर्ष करोड़ों रुपया विज्ञापनों पर खर्च करता है, तीन प्रान्तों की बड़ी-

बड़ी ३८ झीलों को संरक्षित करने की दिशा में ठोस कदम उठायें है। २० राज्यों की ३४ नदियों को राष्ट्रीय नदीं संरक्षण कार्यक्रम में शामिल किया है २६७ स्वच्छ विकास तन्त्र परियोजनाएँ शुरु की है, क्लोरो फ्लोरो कार्बन और हेलोन के उत्पादन और खपत को नियंत्रित करने की दिशा में ठोस कदम उठायें है, गिद्धों की संकटापन्न प्रजातियों को संरक्षित करने के पग उठायें हैं, वन्य क्षेत्र को विकसित करने की योजनाएँ बनाई हैं, वन्य मरुस्थल की रक्षा के लिए सुरक्षात्मक उपाय ढूंढे हैं, बढ़ते मरुस्थल को रोकने के लिए डेजर्ट एण्ड ड्रॉट प्रोन एरिया डेवलपमेन्ट प्रोग्राम चलाए जा रहे हैं, गाँवों के तालाबों का पुनः निर्माण कराया जा रहा है।

ये सब कदम अपनी जगह ठीक हो सकते हैं, भले ही वे कागजी अधिक क्यों न हों और भ्रष्टाचार की भेंट क्यों न चढ़ रहे हों। सवाल यह है कि यदि भारत सरकार और प्रान्तीय सरकारें पर्यावरण प्रदूषण को लेकर वास्तव में चिन्तित व ईमानदार है तो अब तक देश के बूचड़खाने बन्द क्यों नहीं हुए? मांसाहार को प्रोत्साहित क्यों किया जा रहा है ? धूम्रपान पर पूर्ण प्रतिबन्ध क्यों नहीं लगा है ? रासायनिक उर्वरकों और रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग वर्जित क्यों नहीं हुआ है? नदियों का जुड़ाव अभियान बन्द क्यों कर दिया गया ? लघु गुटीर उद्योगों के स्थान पर विशाल मिल्स, ईंट भट्टै, डिस्टिलरीज, सुगर मिल्स, क्लाथ मिल्स क्यों पनप रहें है ? नदियों में प्रदूषित जल क्यों प्रवाहित हो रहा है ? पोलिथीन और प्लास्टिक वस्तुओं का निर्माण प्रतिबंधित क्यों नहीं है ? जाहिर है कि देश के पर्यावरण को दूषित करने वाले ये सभी कारण न केवल मौजूद हैं बल्कि दिन-व-दिन फलते-फूलते भी जा रहे हैं जिससे पर्यावरण शुद्धि का नारा एक ढकोसला बनत जा रहा है और सरकार की ईमानदारी, कार्यशैली और इच्छा-शक्ति पर प्रश्न चिन्ह लगा रहा है।

पर्यावरण-शुद्धि के लिए हमारे पूर्वजों ने यज्ञ-पद्धति को विकसित किया था। बाढ़ और सूखा से निपटने के लिए यज्ञों की विशेष महत्ता रही है क्योंकि वे वर्षा करा भी सकते हैं और रुकवा भी सकते हैं। रोग निवारण में भी यज्ञ धूम का विशेष महत्व रहा है। यज्ञ में समिधा (लकड़ी), सामग्री (जड़ी-बूटियाँ), मिष्ठान (किशमिश, शक्कर, बादाम, अखरोट आदि), घृत (गाय का घी) का प्रयोग होता है जिसका अर्थ है इस पवित्र धार्मिक परम्परा को निभाने के लिए हमें अपनी वृक्ष सम्पदा, वन्य सम्पदा, जड़ी-बूटियों व गोधन को अनिवार्य रुप से संरक्षित रखना चाहिए। आज भले ही यूरोप और अमेरिका में यज्ञ-पद्धति को लेकर अनुसन्धान हो रहे हों और उनमें परमाणु-रोधक शक्ति की महत्ता स्वीकारी जा रही हो लेकिन हमारे देश में इसे साम्प्रदायिक कर्म-काण्ड मात्र मान कर उपेक्षित किया जा रहा है। वेद विरोधी सम्प्रदायों को तो यह फूटी आँख नहीं सुहाता। प्राचीन-काल में जब भी देश में कहीं अति-वृष्टि या अकाल की स्थिति पैदा होती थी तो यज्ञ कराने पर विशेष बल दिया जाता था और उसका तात्कालिक फल मिलता था। आज भी वैज्ञानिक परीक्षणों से यज्ञों की यह फल-श्रुति सिद्ध हो चुकी है। लेकिन साम्प्रदायिक मूढ़ता के शिकार लोग कभी इसे पर्यावरण-प्रदूषण बढ़ाने वाली क्रिया घोषित करते हैं तो कभी घी, ईंधन जड़ी-बूटियों के अभाव और बर्बादी का रोना रोकर इसे निरस्त करने का प्रयास करते हैं। इन सभी तर्कों को खाजिरज करते हुए महर्षि दयानन्द और उनके आर्य समाज ने न केवल यज्ञ को व्यक्ति की दिनचर्या घोषित किया बल्कि इस प्राचीन परम्परा को लोकमानस में स्थापित कर इसके वैज्ञानिक पहलुओं को भी रेखांकित किया।

यज्ञ की यह परम्परा न केवल हमारी वन्य सम्पदा, हमारे पशु धन के संरक्षण का अक्षय सन्देश देती है बल्कि भोग्य पदार्थों के समान वितरण और आध्यात्मिक जीवन-जीने का अक्षय उपदेश भी देती है। इससे वैदिक जीवन मूल्यों की जीवंतता और महत्ता का भी रहस्योद्घाटन होता है। हमारा जीवन यदि यज्ञमय हो जाये तो भारत पुनः अपने स्वर्ण काल की ओर लौट सकता है तथा भारत ही नहीं पूरी विश्व को पर्यावरण प्रदूषण से मुक्त कर सकता है। क्या भारत और संयुक्त राष्ट्र संघ इस दिशा में कुछ सोचेगा, कुछ करेगा ?

पता : सभा भवन, रामलीला मैदान, नई दिल्ली

भारत का महान क्रान्तिकारी : रामप्रसाद बिस्मिल

जन्म : ११ जून १८९७

पुण्य संस्मरण

रामप्रसाद बिस्मिल भारत के महान क्रान्तिकारी थे जिन्होने भारत की आजादी के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी। उनका जन्म ११ जून सन् १८९७ को उत्तर प्रदेश के शाहजहांपुर शहर में हुआ था। उनके पिताश्री मुरलीधर, शाहजहाँपुर नगरपालिका में काम करते थे। १९ दिसम्बर सन् १९२७ को बेरहम ब्रिटिश सरकार ने गोरखपुर जेल में फांसी पर लटकाकर उनकी जीवन लीला समाप्त कर दी।

रामप्रसाद बिस्मिल के दादाजी नारायणलाल का पैतृक गांव बरबई तत्कालीन ग्वालियर राज्य में चम्बल नदी के बीहड़ों में बसे तत्कालीन तोमरधार क्षेत्र किन्तु वर्तमान मुरैनाजिले में आज भी है। बरबई ग्रामवासी बड़े ही उद्दण्ड प्रवृति के व्यक्ति थे जो आये दिन अंग्रेजों व अंग्रेजी आधिपत्य वाले गाम वासियों को तंग करते थे। पारिवारिक कलह के कारण नारायणलाल ने अपनी पत्नी विचित्रादेवी व दोनों पुत्रों मुरलधर एवं कल्याणमल सहित अपना पैतृक गांव छोड़ दिया। उनके गांव छोड़ने के बाद बरबाई में केवल उनके दो भाई अमानसिंह व समान सिंह ही रह गये। उनके वंशज आज भी उसी गांव में रहते हैं। केवछ इतना परिवर्तन हुआ है कि बरबई में रामप्रसाद बिस्मिल की एक भव्य प्रतिमा स्थापित कर दी गयी है।

काफी भटकने के पश्चात् यह परिवार शाहजहाँपुर आ गया। शाहजहाँपुर में मुन्नूगूंज के फाटक के पास स्थित अतार की दुकान पर मात्र तीन रुपये मासिक में नारायणलाल ने नौकरी करना शुरु करदिया। भरे-पूरे परिवार का गुजारा न होता था। मोटे अनाज, बाजरा, ज्वार, सामा, ककुनी को राँध (पका) कर खाने पर भी काम न चलता था। फिर बथुआ या ऐसा ही कोई साग आदि आटे में मिलाकर भूख शान्त करने का प्रयास किया गया। दोनों बच्चों को रोटी बनाकर दी जाती किन्तु पति-पत्नी को आधे भूखे पेट ही गुजारा करना होता। ऊपर से कपड़े-लत्ते और मकान किराये की विकट समस्या तो थी ही।

बिस्मिल की दादीजी विचित्रा देवी ने अपने पति का हाथ बटाने के लिये मजदूरी करने का विचार किया किन्तु अपरिचित महिला को कोई भी आसानी से अपने घर में काम पर न रखता था। आखिर उन्होने अनाज पीसने का कार्य शुरु कर दिया। इस काम में उनको तीन-चार घण्टे अनाज पीसने के पश्चात् एक या डेढ़ पैसा ही मिल पाता था। यह सिलसिला लगभग दो-तीन वर्ष तक चलता रहा। दादीजी बड़ी स्वाभिमानी प्रकृति की महिला थीं, अतः उन्होंने हिम्मत न हारी। उनको पक्का विश्वास था कि एक-एक एक दिन अच्छे दिन अवश्य आयेंगे।

समय बदला। शहर के निवासी शनैः शनैः परिचित हो गये। नारायणलाल थे तो तोमर जाति के क्षत्रिय किन्तु उनके आचार-विचार, सत्यनिष्ठा व धार्मिक प्रवृत्ति से स्थानीय लोग प्रायः उन्हें पण्डितजी ही कहकर सम्बोधित करते थे। इससे उन्हें एक लाभ यह भी होता था कि प्रत्येक तीज त्योहार पर दान-दक्षिणा व भोजन आदि घर में आ जाया करता। इसी बीच नारायणलाल को स्थानीय निवासियों की सहायता से एक पाठशाला में सात रुपये मासिक पर नौकरी मिल गई। कुछ समय पश्चात् उन्होने यह नौकरी भी छोड़ दी और रेजगारी (इकन्नी-दुअन्नी, चवन्नी के सिक्के) बेचने का कारोबार शुरु कर दिया जिससे उन्हें प्रतिदिन पाँच-सात आने की आय होने लगी। अब तो बुरे दिनों की काली छाया भी छटने लगी। नारायणलाल ने रहने के लिये एक मकान भी शहर के खिरनीबाग मोहल्ले में खरीद लिया और बड़े बेटे मुरलीधर का विवाह अपने

ससुराल वालों के परिवार की एक सुशील कन्या मूलमती से करके उसे इस घर में ले आये।

घर में बहू के चरण पड़ते ही बेटे का भी भाग्य बदला और मुरलीधर को शाहजहाँपुर नगर निगम में १५ रुपये मासिक वेतन पर नौकरी मिल गई किन्तु उन्हें यह नौकरी न रूचि। अतः उन्होने त्यागपत्र देकर कचहरी में स्टाम्प पेपर बेचने क काम शुरु कर दिया। इस व्यवसाय में उन्होने अच्छा खासा धन कमाया। तीन बैलगाड़ियाँ किराये पर चलने लगी व ब्याज पर रुपये उधार देने का काम भी करने लगे। ज्येष्ठ शुक्ल ११ संवत १९५४ (वि.) को दोपहर ११ बजकर ११ मिनट पर रामप्रसाद का जन्म हुआ। उस दिन अंग्रेजी तारीख ११ जून १८९७ थी। लगभग सात वर्ष की अवस्था से रामप्रसाद को हिन्दी व उर्दू का अक्षर ज्ञान करवाया जाने लगा। मुरलीधर के कुल ९ संतानें हुई जिनमें पांच पुत्रियाँ एवं चार पुत्र थे। रामप्रसाद उनकी दूसरी संतान थे। उनसे पूर्व एक पुत्र पैदा होते ही मर चुका था। आगे चलकर दो पुत्रियों एवं दो पुत्रों का भी देहान्त हो गया।

बाल्यकाल से ही रामप्रसाद की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। जहां कहीं वह गलत अक्षर लिखता उनकी खूब पिटाई की जाती लेकिन उसमें चंचलता व उद्दण्डता कम न थी। मौका पाते ही पास के बगीचे में घुसकर फल आदि तोड़ लेता जिसकी उसकी कसकर पिटाई भी हुआ करती लेकिन वह आसानी से बाज न आता। शायद यही प्राकृतिक गुण रामप्रसाद को एक क्रान्तिकारी बना पाये अर्थात् वह पुराने विचारों में जन्म से ही पक्का था। लगभग १४ वर्ष की आयु में रामप्रसाद को अपने पिता की सन्दूकची से रुपये चुराने की लत पड़ गई। चुराये गये रुपयों से उसने उपन्यास आदि खरीदकर पढ़ना प्रारम्भ कर दिया एवं सिगरेट पीने व भांग चढ़ाने की आदत भी पड़ गई थी। कुल मिलाकर रुपये चोरी का सिलसिला चलता रहा और रामप्रसाद अब उर्दू के प्रेमरस से परिपूर्ण उपन्यासों व गजलों की पुस्तकें पढ़ने का आदी हो गया था। संयोग से एक दिन भांग के नशे में होने के कारण रामप्रसाद चोरी करते हुए पक्ड़े गये। सारा भाण्डा फूट गया। खूब पिटाई हुई। उपन्यास व अन्य किताबें फाड़ डाली गई लेकिन रुपये चुराने की यह आदत न छूट सकी। हाँ, आगे चलकर थोड़ी समझ आने पर ही इस अभिशाप से मुक्त हो गये।

रामप्रसाद ने उर्दू मिडिल की परीक्षा में उत्तीर्ण न होने पर अंग्रेजी पढ़ना प्रारम्भ किया। साथ ही पड़ोस के एक पुजारी ने रामप्रसाद को पूजा-पठ की विधि का ज्ञान करवा दिया। पुजारी एक सुलझे हुए विद्वान व्यक्ति थे जिनके व्यक्तित्व का प्रभाव रामप्रसाद के जीवन पर दिखाई देने लगा। पुजारी के उपदेशों के कारण रामप्रसाद पूजा-पाठ के साथ ब्रह्मचर्य का पालन करने लगा। पुजारी की देखा-देखी उसने व्यायाम भी प्रारम्भ कर दिया। पूर्व की जितनी भी कुभावनाएँ एवं बूरी आदतें मन में थीं वे छूट गई। मात्र सिगरेट की लत रह गई थी जो कुछ दिनों पश्चात् उसके एक सहपाठी सुशीलचन्द्र सेन के आग्रह पर जाती रही। अब तो रामप्रसाद का पढ़ाई में भी मन लगने लगा और वह बहुत शीघ्र ही अंग्रेजी के पांचवे दर्जे में आ गया।

रामप्रसाद में अप्रत्याशित परिवर्तन हुआ। शरीर सुन्दर व बलिष्ठ हो गया था। नियमित पूजा-पाठ में समय व्यतीत होने लगा था। तभी वह मन्दिर में आने वाले मुंशी इन्द्रजीत के सम्पर्क में आया जिन्होने रामप्रसाद को आर्यसमाज के सम्बन्ध में बताया **'सत्यार्थ प्रकाश'** पढ़ने का विशेष आग्रह किया। **'सत्यार्थ प्रकाश'** के गंभीर अध्ययन से रामप्रसाद के जीवन पर आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ा। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित सुप्रसिद्ध गीत बन्दे मातरम् की लोकप्रियता के बाद भारतवर्ष के महान क्रांतिकारी पं. रामप्रसाद बिस्मिल की गजल सरफरोशी की तमन्रल ही वह अमर रचना है जिसे गाते हुए कितने ही देशभक्त फाँसी के तख्ते पर झूल गये।

सरफरोशी की तमन्रा अब हमारे दिल में है,
देखना है जोर कितना बाजु-ए-कातिल में है ?
वक्त आने दे बता देंगे तुझे ऐ आस्माँ !
हम अभी से क्या बतायें क्या हमारे दिल में है ?

- पं. लोचन शास्त्री, आर्यनगर, दुर्ग

वीरता की देवी रानी लक्ष्मी बाई

– डॉ. अशोक आर्य

भारत के स्वाधीनता संग्राम में देश की वीरांगनाओं ने यह सिद्ध कर दिखाया कि अबला कोमलांगी, रमणी ही नहीं वरण समय आने पर वह सबला, वज्रांगी व रणचण्डी का रूप धारण करने की शक्ति भी रखती है। इतना ही नहीं वह अपने नाम के अर्थ का विपर्यय करने में भी पूर्णतया सक्षम हैं। यह सब उनके बाल्यकाल से ही आरम्भ हो जाता है। जब महारानी लक्ष्मीबाई अभी मनुबाई ही थी तभी उसने बाल सुलभ क्रीड़ाओं में दुर्ग घेरना, चक्रव्यूह तोड़ना, बर्छी चलाना आदि के रुप में खेलें खेली। इन्हीं से ही उसका भावी जीवन प्रतिध्वनित हो गया था। विवाह के पश्चात् जब पति की मृत्यु होने पर अंग्रेज की कम्पनी सरकार ने उसकी एक न सुनी तथा झांसी की बागडोर अपने हाथ में लेने की घोषणा कर दी तो लक्ष्मीबाई ने चण्डी का रूप धारण करते हुए पुरुष वेश में समरांगण में जा डटी।

उसमें मोर्चा बन्दी की अद्‌भुत कला थी। तभी वह अंग्रेजों पर निरन्तर विजय पा रही थी तथा गोरे एक महिला से पराजित होकर मुंह छिपाते फिरते थे। १८ जून १८५८ को लक्ष्मीबाई ने बड़ी सरलता से ग्वालियर पर अधिकार कर लिया। यहां वह चारों ओर से घिरी हुई थी तो भी प्रातः उठकर स्नान ध्यान करना वह न भूलती थी। यहां भी प्रातः उसने यह सब नियम पूरे किये तथा वीरांगना स्वरूप अपना श्रृंगार किया केसरिया बाना पहिन शस्त्र उठाकर तथा शत्रु संहार के लिए साथियों सहित मैदान में जा डटीं। जब उसने पुत्र दामोदर राव को रामचन्द्रराव की पीठ पर बांधा तो सभी समझ गए कि आज वह अपना रणचण्डी का रूप दिखाने वाली है। कुछ ही क्षणों में तोपखाना आग उगलने लगा, अंग्रेजी सेना के साथ ही साथ उसका तोपखाना भी तहस-नहस होने लगा। जिस ग्वालियर की सेना की सहायता के लिए रानी ने जुही के माध्यम से कुमुक भेजी, उसी सेना ने ही विश्वासघात किया। रानी ने धैर्य से काम लिया। वह अंग्रेजी सेना को गाजर, मूली की तरह काटने लगी। गोरे सेना भागने को ही थे कि उन्हें पीछे से सहायता के लिए और सेना आ गई। रानी की पैदल सेना ने भी गोरों से भिड़ कर महाप्रलय का दृश्य बना दिया। इसी मध्य रानी लड़ते-लड़ते रानी अकेली रह गई तथा उसकी सहेली मुन्दरा भी बुरी तरह से घायल हो गई। रानी दोनों हाथों से बिजली की गति से तलवार चलाते हुए मार काट मचा रही थी। वह भी बुरी तरह से घायल हो चुकी थी। रानी के साथी भी काल बनकर परकीयों से जूझ रहे थे।

रानी की अन्तिम अवस्था को निकट देख गुलमुहम्मद ने उन्हें बाबा गंगादास की कुटिया तक पहुंचाया। यहां पहुंचने तक रानी की अवस्था बहुत बिगड़ चुकी थी। मुन्दरा तो ईश चरणों में जा चुकी थी। महारानी ने भी एक बार आंखे खोंली और फिर सदा के लिए प्रभु चरणों में लीन हो गई। इस प्रकार जो ज्योति २१ अक्टूबर १८३५ में प्रज्वलित हुई थी, वह मात्र २३ वर्ष में इतनी आभा बिखेर कर सदा के लिए अस्त हो गई, किन्तु इतिहास में उनके शौर्य के चर्चे सदा होते रहेंगे।

पता : मण्डी डबवाली, आर्य कुटीर, ११६, मित्र विहार, १२५१०४, हरियाणा

पुण्य स्मरण

दानवीर तुलाराम जी परगनिहा के प्राकट्य दिवस पर पुण्य स्मरण

दानवीर श्री तुलाराम परगनिहा द्वारा दिनांक २६-६-१९२६ को स्त्री शिक्षा, संस्कृत तथा वैदिक शिक्षा के प्रसारण हेतु छत्तीसगढ़ में आर्यसमाज की स्थापना करते हुए उसे अपना सर्वस्व दान कर दिया था। तुलाराम परगनिहा के पूर्वज केशवराम खांडकपूर सर्वप्रथम सेवार-कड़ार (बिलासपुर) में आकर बस गये। जलस्रोत के अभाव के कारण वे वहां अधिक दिनों तक निवास नहीं कर सके और अपने परिवार के साथ दुर्ग जिला की ओर प्रस्थान कर गये। उनकी एक शाखा धमधा राज के सीमावर्ती गाँव तारालीम (विकास खंड बेरला) में आकर निवास करने लगा। ये कृषि कार्य में दक्ष थे। १८६३ ई. के भयंकर अकाल के समय नगहा खांड़कपूर ने अन्न-धन वितरण कर परगना के लोगों को अकाल मृत्यु से बचाया था। इसलिए धमधा के तत्कालीन राजा भवानी सिंह ने उनके उदार सेवा भाव के कारण "परगनिहा" की उपाधि से नवाजा था। तब इसका वंश परगनिहा उपजाति के नाम से जाने जाना लगा।

इस संदर्भ में अवगत हो कि केशवराम खांडकपूर के वंश में तुलाराम जी परगनिहा आठवीं पीढ़ी संतान थे। सन् १८६३ में राय साहेब पीताम्बर सिंह पगरनिहा के परिवार में ग्राम भिंभौरी, जिला दुर्ग में इनका जन्म हुआ। अपने पिता की चार संतानों में इनका क्रम दूसरा था। परगनिहा परिवार जनवा कूर्मि के नाम से जाना जाता है। आज इनका वंश दुर्ग एवं रायपुर जिले में विस्तृत है। तुलाराम परगनिहा की प्रारम्भिक शिक्षा रायपुर में हुई। बचपन से वे मेधावी छात्र रहे। परिवार की धार्मिक पृष्ठ भूमि के कारण इन्हें आगे अध्ययन के लिये धर्म नगरी इलाहाबाद भेजा गया। जहां से इन्होंने स्नातक की उपाधि प्राप्त किया और छत्तीसगढ़ का प्रथम स्नातक होने का गौरव प्राप्त किया। तुलाराम परगनिहा ने शासकीय सेवा करने का निश्चय किया। सन् १९०५ (४२ वर्ष की उम्र) में वे तहसीलदार के पद पर सागर में पदस्थ हुए। अपनी शिक्षा व शासकीय सेवा के दौरान अनेक महापुरुषों के सान्निध्य में आये और सेवाभावी संस्थाओं से निकट का संबंध बनाये रखा। इस समय हमारे देश में धार्मिक व सामाजिक सुधार आन्दोलन अपना प्रभाव स्थापित करने लगा था। स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित आर्यसमाज उत्तरप्रदेश, राजस्थान, गुजरात और पंजाब में महत्वपूर्ण सामाजिक और राजनैतिक शक्ति बन गया था। उसकी एक शाखा सीपी (मध्यप्रदेश) एवं बरार के नाम से नागपुर में स्थापित हो गई। दुर्ग के प्रसिद्ध मालगुजार एवं वकील घनश्यामसिंह गुप्त को इस प्रतिनिधि सभा का प्रधान नियुक्त किया गया। तुलाराम ने इन संस्थाओं के प्रमुखों से सतत् संपर्क बनाये रखा और संस्था के कार्यों से प्रभावित होते हुये स्त्री शिक्षा के लिए सर्वस्व दान कर दिये।

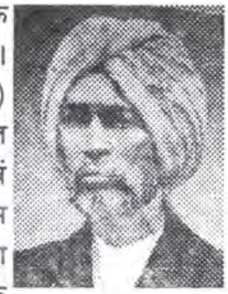

सोनाखान की जमींदारी को ब्रिटिश राज्य सम्मिलित करने के पश्चात् गोल्ड माइनिंग कंपनी ने खरीद लिया था, परन्तु व्यवसायिक दृष्टि से यह उनके लिए हानिकारक साबित हुई। इसलिए उन्होने इसे बेचने का निर्णय लिया। सन् १९२० ई. में इनके पिता राय साहेब पीताम्बर सिंह परगनिहा ने इस कंपनी के पार्टनर जेम्स हंडरसन से कलकत्ता जाकर भेंट की। वीशब कॉटन स्कूल हावड़ा के छात्रावास में सोनाखान जमींदारी का सौदा निश्चित हुआ और उन्होने इस जमींदारी के २२ गांव १८ हजार रुपये में खरीद लिये।

तुलाराम परगनिहा की दो पत्नियाँ थीं। महासिर बाई एवं कलावती बाई। इनकी दो संतानें थीं। एक लड़की गुरुदेवी और एक पुत्र मोक्षेन्द्र नाथ हुआ। अल्पायु में ही पुत्र के कालकवलित (मृत्यु) हो जाने के बाद, वे पुत्र वियोग में बीमार रहने लगी। उन्होंने अपनी पुत्री का विवाह कविराज जगदीशचन्द्र बघेल संकरी (बलौदाबाजार) के साथ कर दिया। शासकीय सेवा से अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् उनका मन विचलित रहने लगा और अपने परिवार सहित सन् १९२५ ई. में पैतृक गांव छोड़कर कूंरा (धरसींवा) जिला रायपुर आ गये। इनका झुकाव प्रारंभ से ही आर्यसमाज की ओर था और अब उन्होंने निश्चिय किया कि अपनी पूर्ण सम्पत्ति को राष्ट्रीय आकांक्षाओं के अनुरुप संस्कृत शिक्षा, स्त्री शिक्षा, वैदिक धर्म प्रचार और अनाथ सेवा में समर्पित कर देंगे। कूंरा आने के पश्चात् वे दाऊ घनश्यामसिंह गुप्त के अधिक निकट आये, जो आर्य प्रतिनिधि सभा म.प्र. और

बरार के प्रधान थे। उन्होंने संकल्प लिया कि वे समाज सुधार और छत्तीसगढ़ में स्त्री शिक्षा प्रचार करने अपनी सारी सम्पत्ति आर्यसमाज को दान कर देंगे। इस आशय का उन्होंने अंतिम वसीयत कर दिया। अपनी इस अंतिम इच्छा को पूर्ण करने के लिए पैतृक सम्पत्ति का बंटवारा लिया और कूंरा ग्राम को ३० हजार रुपये में खरीदा।

तुलाराम परगनिहा समाज के उपेक्षित और पिछड़े वर्ग के उत्थान के साथ-साथ अनाथों के प्रति सहानुभूति रखते थे। छत्तीसगढ़ में स्त्री शिक्षा का विकास करना ही उनका प्रमुख लक्ष्य था। इसलिए ६३ वर्ष की आयु में उन्होंने सोनाखान जमींदारी के चार गांव चनाट, कसौंदी, भुसड़ीपाली, बोदापाली की कुल सम्पत्ति एवं ५५ सौ एकड़ जमीन, ढनढनी का पूरा गाँव, लवन का २५ प्रतिशत, कूंरा की पूरी सम्पत्ति एवं ३५० एकड़ भूमि, इसके अतिरिक्त ढाबा, कुम्ही और बोरिया प्रत्येक की २५ प्रतिशत सम्पत्ति उद्देश्य पूर्ति के लिए आर्यसमाजी संस्था को दिनांक २६ जून १९२६ को दान देकर वसीयत कर दिया। अपनी एकमात्र पुत्री गुरुदेवी के मुरहुठी गांव का सात आना जो उनके हिस्से में था, जीविकोपार्जन के लिए दे दिया। उन्होंने कुल स्थावर एवं जंगम जायजाद का पूरा-पूरा मालिकाना हक श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा म.प्र. एवं बरार को देकर पैतृक निवास भिभौरी की जायजाद को अपनी दोनों पत्नियों के परवरिश के लिये छोड़ दिया। इस तरह प्रथम स्नातक होने के साथ-साथ छत्तीसगढ़ में आर्यसमाज के संस्थापक बन गये।

छत्तीसगढ़ में ऐसे बहुत कम लोग हैं जिन्होंने अपना सर्वस्व त्याग कर निःस्वार्थ भाव से छत्तीसगढ़ का विकास चाहा हो। संस्कृत शिक्षा के प्रति उनकी विशेष आस्था था। स्त्री शिक्षा के वे जबरदस्त पक्षधर थे। अनाथ बच्चों के प्रति उनके मन में दया का भाव विद्यमान था। इसलिए अपनी वसीयत में अपनी अंतिम इच्छा इस प्रकार व्यक्त किया - "मेरी यह प्रबल इच्छा है कि मेरी जायदाद किसी व्यक्ति विशेष के उपयोग में न आवे और कोई व्यक्ति विशेष उसका स्वामी नहीं हो, बल्कि मेरी यह प्रेरणा है कि मेरी सम्पूर्ण जायदाद किसी पुण्य कार्य में लग जावे और ऐसी संस्था के स्वामित्व में जावे जो कि सुसंस्कृत विद्या दान, स्त्री शिक्षा, गुरुकुल, अनाथ रक्षा आदि के लिए प्रयत्न करती हुई वैदिक धर्म का प्रचार व विस्तार में लगी रहती है। सब बातों को अच्छी तरह सोंचकर और बहुत विचार के बाद मैंने यह पक्का निश्चय किया है कि मेरी जायजाद मेरे मरने के बाद आर्यसमाजी संस्था को जावे।" अपनी इच्छा को मूर्तरुप प्रदान करने का दायित्व सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली एवं जालंधर कन्या महाविद्यालय के संचालकों पर छोड़ दिया कि वे इस जायदाद से छत्तीसगढ़ के किसी स्थान में कोई विद्या दान की संस्था, स्त्री शिक्षा के लिए विद्यालय जालंधर कन्या विद्यालय के नमूने पर चलावें। इस प्रकार छत्तीसगढ़ के इस सपूत ने छत्तीसगढ़ में आर्यसमाज की नींव डाली। दिनांक २६ जून १९२६ ई. मिती जेठ सुदी १४, संवत् १९८३ के दिन उनके वसीयत पर हस्ताक्षर हुए। गवाह के रुप में उनके भाई दाऊ उदयराम परगनिहा एवं सोनपैरी वाले हेमनाथ ब्राह्मण मालगुजार के हस्ताक्षर के साथ घनश्यामसिंह गुप्ता दुर्ग ने आर्य प्रतिनिधि सभा म.प्र. विदर्भ की ओर से हस्ताक्षर किया। यह वसीयत ३ जुलाई १९२६ को विधिवत पंजीकृत हुआ। इसके कुछ समय बाद ही २५ अगस्त १९२६ को तुलाराम जी परगनिहा का स्वर्गवाश हो गया।

उनकी इच्छा के अनुरुप आर्य प्रतिनिधि सभा ने दुर्ग में दाऊ तुलाराम आर्य कन्या विद्यालय की स्थापना की, जो आज कन्या महाविद्यालय के रुप में संचालित है। छत्तीसगढ़ शासन द्वारा ग्राम उतई जिला दुर्ग में दानवीर तुलाराम जी परगनिहा की स्मृति में महाविद्यालय संचालित किया जा रहा है।

वर्तमान में लवन, कूरा, ढाबा एवं कुम्ही में लगभग ६०० एकड़ जमीन एवं सभा बाड़ा छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के आधिपत्य में कृषि कार्य संपादित करते हुए तुलाराम परगनिहा के नाम पर कन्या विद्यालय संचालित कर रही है। दिनांक १ नवंबर २००० को मध्यप्रदेश से अलग होकर छत्तीसगढ़ राज्य निर्माण होने के पश्चात दिसंबर २००३ से विधिवत छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा का गठन किया जाकर विगत १३ वर्षों से संस्था सुचारु रुप से संचालित हो रही है। आर्यसमाज संगठन के शिरोमणी संस्था सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के तत्कालीन सभा प्रधान कैप्टन देवरत्न आर्य द्वारा प्रमाण पत्र देते हुए, छत्तीसगढ़ प्रान्त स्थित दानवीर तुलाराम परगनिहा द्वारा प्रदत्त समस्त चल-अचल सम्पत्ति एवं आर्यसमाजों के प्रबंधन का सम्पूर्ण अधिकार छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा को दिया गया है। **दानवीर तुलाराम जी परगनिहा की स्मृति में आयोजित प्राकट्य दिवस दिनांक २६ जून २०१८को सभा बाड़ा लवन में मनाये जाने का निश्चय किया गया है।**

इस अवसर पर सभा बाड़ा लवन में विश्व कल्याण महायज्ञ प्रवचन, संगीतमय भजनोपदेश का एक दिवसीय आयोजन किया जायेगा, जिसमें **"सुरता तुलाराम जी परगनिहा आर्य"** प्रस्तुत किया जायेगा। दानवीर के परिवार के निकट सम्बधियों का सम्मान किया जायेगा एवं ऋषि लंगर का आयोजन किया जायेगा।

- दीनानाथ वर्मा, मंत्री

न्यायालय ने दिया महत्वपूर्ण फैसला

आर्यसमाज में दाहसंस्कार के लिए महिला/पुरुष की बाध्यता नहीं

दुर्ग। गत दिनांक 26 मई 2018 को दैनिक हरिभूमि के दुर्ग संस्करण में प्रकाशित इस समाचार ने एक बार फिर वैदिक संस्कृति की श्रेष्ठता एवं आर्यसमाज की वैज्ञानिक मान्यता पर मोहर लगा दी है। आर्यसमाज अपने जन्मकाल से ही दकियानुसी सोच पर कुठाराघात करता आया है। वैदिक संस्कृति में नारी का स्थान अत्यन्त गरिमामंडित है। पुरुष और नारी दोनों ही राष्ट्रोन्नति के आधार हैं। पुरुष यदि द्युलोक है तो नारी पृथ्वीलोक है दोनों के सामंजस्य से ही सौर जगत् गतिमान बना है।

वैदिक संस्कृति जैसा नारी का श्रेष्ठतम् स्थान विश्व के किसी भी संस्कृति में नहीं है। इस्लाम में नारी इमाम नहीं बन सकती न ही ईसाई मत में नारी बपतिस्मा करा सकती है किन्तु वैदिक धर्म में नारी यज्ञ करा सकती है इसी कारण उसे आचार्या कहा गया - **"स्त्रीहि ब्रह्मा बभूविथ"** वेद में लिखा- धर्म कर्म में नारी का वही स्थान है जो पुरुष का है। मध्यकाल में तथाकथित धर्माचार्यों ने स्वार्थवश नारियों के अधिकार हड़पकर नारी को शूद्रसम बता दिया। मुगलकाल में पैर की जूती समझी गई। घर की चार दीवारी में कैद कर छटपटाने को मजबूर कर दी गई। बूरका पहनाकर चौका चूल्हा तक सिमटा दी गई। उसे केवल भोग की वस्तु माना गया। विधवा को पुनर्विवाह से वंचित कर नारी समाज को गर्त में डाल दिया। पति की मृत्यु के उपरान्त स्त्री को जबरन उसके साथ जला दिया जाता रहा। छोटी-छोटी कन्याओं की शादी बूढ़ों से कर दी जाती थी। मन्दिरों में चढ़ाकर देवदासी के रुप में तिलतिलकर मरने को विवश होती थी। बेटा-बेटी में भेदभाव करने की कुण्ठित मानसिकता भी एक भयंकर अंधविश्वास का रुप धारण कर चुकी है। ऐसी कुप्रथाएँ लम्बे काल तक रही। इनमें कुछ आज तक चलती आ रही है। जैसी **दाह संस्कार केवल बेटा ही कर सकता है बेटी नहीं** जबकि संस्कारों के प्रतिपादक गृह्यसूत्रों में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है।

आर्यसमाज की रीति-नीति के अनुसार दाह-संस्कार के लिए किसी महिला-पुरुष या पारिवारिक सदस्य की बाध्यता नहीं है। आपसी सहमति से यह संस्कार कोई भी कर सकता है। यह महत्वपूर्ण फैसला एक परिवाद में देते हुए दुर्ग (छ.ग.) के विद्वान् न्यायाधीश श्री प्रवीण मिश्रा ने याचिका खारिज कर दी। दरअसल मामला ऐसा था कि प्रसिद्ध फिल्म अभिनेता सुनील दत्त की मौसी और आर्यसमाज भिलाई की संस्थापक सदस्य व पूर्व अध्यक्ष समाज सेविका 94 वर्षीय 38 ओल्ड नेहरु नगर भिलाई निवासी **सावित्री बख्शी** पति स्व. तीरथराम बख्शी का 8 नवम्बर 2009 को केंसर से निधन हो गया था। वे सतीशचन्द्र छिब्बर, सुभाषचन्द्र छिब्बर, जितेन्द्र बख्शी और सुमनबाली की मां थी। उनका अंतिम संस्कार 9 नवम्बर को रामनगर मुक्तिधाम भिलाई में वैदिक रीति-रिवाज से किया गया था। उनकी इच्छा के मुताबिक उनके ज्येष्ठ पुत्र सतीशचन्द्र छिब्बर ने भिलाई आर्यसमाज के धर्माचार्य उद्धव शास्त्री से सामाजिक कुरीतियों को मिटाने के उद्देश्य से दाह संस्कार कन्या गुरुकुल आमसेना की विदुषी कन्या द्वारा करवाने का आग्रह किया। इसके अनुरुप परिजनों, आर्यसमाज भिलाई, गुरुकुल आमसेना खरियाररोड के शास्त्रियों की मौजुदगी में वैदिक रीति से किया गया था, उनकी पार्थिव देह को अग्नि संस्कार गुरुकुल की विदुषी स्नातिका **कुमारी सुरुचि शास्त्री** ने दी। गुरुकुल आमसेना के स्वामी व्रतानन्द के साथ 8 शास्त्रियों और आर्यसमाज भिलाई के राजकुमार शास्त्री व उद्धव शास्त्री व अन्य विद्वानों ने अंतिम संस्कार करवाया था। वैदिक मंत्रोच्चार के बीच स्व. बख्शी की चिता पर आहुतियां पुत्र सतीशचन्द्र, सुभाषचन्द्र, जितेन्द्र बेटी सुमन व अन्य बहुओं ने डाली थी। उसके बावजूद **सतीशचन्द्र के दोनों भाईयों ने उनपर मानहानि का मुकदमा और धार्मिक भावना को आहत करने का मुकदमा चलाने के लिए परिवाद प्रस्तुत कर दिया था। ऐतिहासिक फैसले में न्यायाधीश ने कहा कि मृतका सावित्री बख्शी आर्यसमाज से जुड़ी थी, आर्यसमाज के सिद्धान्त पर उनकी गहरी आस्था थी, उनकी मृत्यु बाद अन्तिम संस्कार एक लड़की से कराया गया। यह संस्कार महिला या पुरुष से कराने से किसी तरह की धार्मिक भावना आहत नहीं होती। इससे किसी के सम्मान को ठेस पहुंचे ऐसा परिवाद में प्रदर्शित नहीं होता इसलिए परिवाद को निरस्त किया जाता है।**

उपर्युक्त न्यायालयीन निर्णय को छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के यशस्वी प्रधान आचार्य अंशुदेव आर्य जी ने प्रसन्नता प्रकट करते हुए वैदिक परम्परा की विजय के रुप में निरुपित किया है। क्रान्तिकारी संस्था आर्यसमाज ने भारत के अन्दर जालन्धर (पंजाब) में लड़कियों के लिए पहला स्कूल खोला था। नारी उद्धार हेतु ही आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने कितनी यातनाएँ झेली और इसे शिक्षा का अधिकार दिलाया। नारी उत्पीड़न, दहेज-हत्या, नारी शोषण, नारी अत्याचार, वैज्ञानिक युग की दुहाई तथा अन्तरिक्ष युग का उद्घोष दूसरी ओर समाज की संकीर्ण मानसिकता नर-नारी में भेदभाव, नारी प्रतिभा की उपेक्षा उसकी उन्नति में बाधा डालना अपनी प्राचीन संस्कृति की घोर उपेक्षा करना है। राष्ट्रोन्नति का मूलाधार नारी है क्योंकि वही सुयोग्य नागरिक का निर्माण सन्तति द्वारा करती है, इसलिए वह सुसंस्कृत, समुन्नत, जागृत और सशक्त होगी, तभी समाज व राष्ट्र उन्नति के शिखर में पहुंच सकेंगे अन्यथा नहीं। ईश्वर सद्बुद्धि दे, जिससे सभी को समान अवसर प्राप्त हो और वे जीवन को सार्थक कर सकें।

- सम्पादक

महर्षि दयानन्द आर्य उ.मा. विद्यालय टाटीबन्ध रायपुर के बोर्ड परीक्षा परिणाम

रायपुर। महर्षि दयानन्द आर्य उ.मा. विद्यालय टाटीबन्ध रायपुर के बच्चों ने इस बार १२वीं एवं १०वीं की परीक्षा में उत्कृष्ट प्रदर्शन किया है। विद्यालय में इस बार १२वीं से ८५.९ फीसदी विद्यार्थी उत्तीर्ण हुए। वहीं कक्षा १०वीं में ८२.८ फीसदी विद्यार्थी सफल रहें। कक्षा १२वीं कु. अल्का गिल ७९% लाकर कक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त की है। वही धनेष मनहरे ने ७१.८% अंकों के साथ द्वितीय स्थान प्राप्त किया है। वहीं कक्षा १०वीं में विद्यालय की कुमारी खुशी सिंह ने ८९% अंकों के साथ प्रथम एवं जीत वर्मा ने ८६.६% फीसदी अंकों के साथ दूसरा स्थान तथा कु. चेतना साहू ने ८५ फीसदी अंकों के साथ तीसरा स्थान प्राप्त किया है। हमारे विद्यालय के कक्षा १२वीं के छात्र/छात्राओं में १५ प्रथम श्रेणी, २२ द्वितीय श्रेणी, १८ तृतीय श्रेणी से उत्तीर्ण हुए। इसी प्रकार १०वीं में २३ प्रथम श्रेणी, २८ द्वितीय श्रेणी, ७ तृतीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुए।

संवाददाता : पुरुषोत्तम प्रसाद वर्मा उपप्राचार्य, म.द.आ.उ.मा.वि.

मुण्डन संस्कार सोल्लास सम्पन्न

दुर्ग। गत माह बुद्ध पूर्णिमा के अवसर पर छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा का मुख पत्र अग्निदूत के यशस्वी सम्पादक आचार्य कर्मवीर शास्त्री के सुपुत्र "सम्भव" का मुण्डन संस्कार सभाप्रधान आचार्य अंशुदेव आर्य जी के ब्रह्मत्व में पूर्ण वैदिक रीति से समारोह पूर्वक सम्पन्न हो गया। इस अवसर पर बड़ी संख्या में आर्यसमाज आर्यनगर के सदस्य आशीर्वादहेतु सम्मिलित हुए। संस्कारोपरान्त प्रसाद वितरण के साथ कार्यक्रम समापन की घोषणा की गई। समारोह में आचार्य नारायण शास्त्री, आचार्य तरुण शास्त्री, आचार्य उद्धवशास्त्री परिवार सहित, लोचन शास्त्री, अनिल आर्य, अजीत आर्य, ऋषि आर्य, देवेन्द्र आर्य इत्यादि अनेक गणमान्य जनों की गरिमामयी उपस्थिति रही। **- संवाददाता : निज संवाददाता**

प्रान्तीय आर्य वीर दल शिविर सोल्लास सम्पन्न

अम्बिकापुर। आर्यवीर दल छत्तीसगढ़ के तत्वावधान में दि. २ मई से १० मई २०१८ तक युवा चरित्र निर्माण शिविर संत हरकेवल विद्यापीठ नमनाकला अम्बिकापुर सरगुजा में आयोजित किया गया। जिसमें प्रदेश के कई जिलों से १२० आर्यवीरों ने भाग लिया। श्री संत हरकेवल दास जी महाराज के करकमलों से ध्वजत्तोलन एवं आर्यवीर दल के प्रान्तीय पदाधिकारियों के उपस्थिति में प्रारम्भ किया। प्रशिक्षण का कार्य श्री सत्यमजी राजस्थान मुख्य व्यायाम शिक्षक, श्री वेदव्रत जी उड़ीसा व श्री लोमस जी द्वारा किया गया। बौद्धिक विकास पर भी विशेष बल दिया गया। डॉ. कमलनारायण जी, श्री कपिल शास्त्री जी, श्री बजरंग मुनि जी, श्री अशोकानन्द जी, श्री रामनारायण शर्मा जी, श्री जनकराम जी, श्री कान्हुराम जी द्वारा बौद्धिक का कार्य सम्पन्न कराया गया। जिसके फलस्वरुप शिविरार्थियों के दिनचर्या में बहुत परिवर्तन देखा गया। मौसम को ध्यान में रखते हुए दूध व दही की व्यवस्था डॉ. रामकुमार पटेल द्वारा कराया गया। जिसमें अन्य दानी महानुभाव एवं समाजसेवी संगठनों द्वारा सहयोग प्रदान किया गया। समापन समारोह में उपस्थिति के अतिथि श्री संत हरकेवल दास जी महाराज, डॉ. रामकुमार पटेल संचालक आर्यवीर दल छ.ग. आचार्य अंशुदेव आर्य प्रधान छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, डॉ. कमलनारायण आर्य जी उपप्रधान छ.ग. श्री चिंतामणी जी महाराज लुण्ड्रा विधायक, श्री अनिल सिंह जी तोमर मेजर, श्री जोगीराम आर्य कोषाध्यक्ष सभा, श्री बंशीधर जी उरांव, आचार्य कोमल, आचार्य राकेश, आचार्य जैमिनि कुमार शर्मा, श्री लेखनकार आर्य, श्री रामेश्वर जी, श्री विजय पटेल, श्री रविशंकर आर्य, श्री संजय गिरी जी, श्री ठाकुर राम, श्री कमलेश सोनी आदि उपस्थित थे। व्यवस्था में पूरा समय दिया जिसके फलस्वरुप सफलता मिली श्री अशोकानन्द जी. श्री ओमप्रकाश शास्त्री, श्री धरनीधर आर्य, श्री विभूति गुप्ता, श्री राजेन्द्र आर्य, दशरथ आर्य, शैलेश बीसी, अवंतिका, गोल्डी गजौरिया, हेमन्त सोनी सहित सैकड़ों आर्यजनों की उपस्थिति यह शिविर सोल्लास सम्पन्न हुआ। **- संवाददाता : ओमप्रकाश शास्त्री, उपमंत्री आर्यवीर दल, छ.ग.**

स्वामी अशोकानन्द जी और सत्यम जी द्वारा
योगा व एक्यूप्रेशर प्रशिक्षण प्राप्त करते हुए शिविरार्थीगण

आर्यवीर दल शिविर के समापन समारोह अवसर पर मंचासीन अतिथिगण

आर्यवीर दल छत्तीसगढ़ के प्रधान संचालक
डॉ. रामकुमार पटेल व्यायाम शिक्षिकों के साथ

समापन समारोह में पधारे अतिथिगण - संत हरकेवल दास महाराज, आचार्य अंशुदेव आर्य (सभा प्रधान) डॉ. कमलनारायण आर्य, चिंतामणि महाराज, अनिल सिंह मेजर, बजरंग मुनि, डॉ. रामकुमार पटेल एवं अन्य आमंत्रित अतिथिगण

CHH-HIN/2006/17407 जून 2018 डाक पंजी. छ.ग./दुर्ग संभाग / 99/2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लायसेंस नं. : TECH/1-170/CORR/CH-4/2017-18-19

सम्पादक प्रकाशक मुद्रक आचार्य अंशुदेव आर्य द्वारा छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग के वैदिक मुद्रणालय से छपवाकर प्रकाशित किया गया।
प्रेषक : "अग्निदूत", हिन्दी मासिक पत्रिका, कार्यालय, छ.ग. प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग (छ.ग.) 491001